चिड़ियाघर

★

लेखक

पं० हरिशङ्कर शर्म्मा

प्रकाशक

गयाप्रसाद एण्ड संस, आगरा

विषय सूची

'चिड़ियाघर' की चख़चख़

कभी-कभी मनुष्य के ठाली दिमाग मे, कुछ खुजली-सी उठा करती है। उस समय उसे प्रायः हँसी-दिल्लगी या विनोद की बाते ही वहुत सूझती है। वह मित्र-मण्डली मे वैठकर मनोरजन करने लगता है। उस समय का विनोद सार्थक हो चाहे निरर्थक, परन्तु वह थोडी देर के लिये, चहल-पहल और मनबहलाव का साधन अवश्य बन जाता है। इस चिड़ियाघर' मे ऐसे ही ठाली दिमाग की कुछ कल्पनाएँ एकत्र कर दी गयी है। मालूम नही, उनसे पाठको का मनबहलाव होगा कि नही।

पाठक देखेगे कि इस 'चिड़ियाघर' मे कही तो 'काक कवि' 'काँव-कॉव' कर रहे है और कही 'कीर कवि' राम-रटना में निमग्न है। कही 'कपोत कवि' की 'गुटुरगूँ' हो रही है, तो कही 'कुक्कुटराज' की 'कुकडूकूँ' सुनाई देती है। कही 'कुलङ्ग कवि' पख फडफडा रहे है, तो कही 'कारण्डव-कवि' चौच चला रहे है। कही 'लीडर-लीला' दिखाई देती है, तो कही 'पशु-पक्षियो की पार्लियामेट' मे अधिकार-अन्धड उठ रहा है। कही 'मुछमुण्ड-महामण्डल' मे मूछो पर बुरी तरह बीत रही है। कही 'विनोदानन्दजी' व्याख्यान झाड रहे है, तो कही 'कम्बख्तराय' गला फाड रहे है। कही 'काव्य-कण्टक का कोप' है, तो कही 'पदवी पतुरिया' का क्षोभ है। कही राजनीति-रमणी' मटकती है, तो कही 'विरादरी-भुतनी' भटकती है। कही व्याहे बुढऊ की बरात चलती है, तो कही विना व्याही वधू जलती है। निदान इसी प्रकार के "जटल काफियो" से यह पुस्तक भरी पडी है।

पाठक जानते है, कि 'चिडियाघर' की सैर करते समय कोई जन्तु तो दर्शक की तरफ गुर्राता है, कोई मुँह मटकाता है, कोई दुलत्ती झाडता है, कोई दुम हिलाता है, कोई भौं-भौ कर पीछे पड़ता है, कोई पंख फड़फडाकर ऊपर उड़ता है, कोई चौच चलाता है और कोई गर्दन हिलाकर आगे बुलाता है। परन्तु दर्शकगण अपने मनोविनोद मे निमग्न रहते है। उन्हे न किसी के भौखने से भय होता है न दुम हिलाने से .खुशी हासिल होती है। वह तो समझ लेते है कि यह मनोरजन की जगह है, अतएव जन्तुओ की हरकतो पर ध्यान न देकर उन्हे दिल भर कर देखना चाहिए; और हो सके तो किसी से कुछ शिक्षा भी ग्रहण करनी चाहिए। हम समझते है, इस 'चिड़ियाघर' के दर्शक भी उसे इसी दृष्टि से देखेगे और किसी जन्तु की जा-बेजा हरकत से बिल्कुल नाराज न होगे।

'चिड़ियाघर' तैयार हो गया, उसके सारे पिजडे भर गये, कोई स्थान खाली न रहा तो ज़रूरत हुई कि उसकी 'ओपनिग सैरिमनी' (उद्घाटनोत्सव) कराई जाय। यह समस्या सामने आई। बड़े डरते-झिझकते, सकुचाते-लजाते काव्य-कानन-केसरी आचार्य प्रवर श्री प० पद्मसिहजी शर्मा से इस कार्य के लिये प्रार्थना की गई—साथ ही हृदय मे धकधकी बनी रही कि कही पूज्य आचार्य जी इस 'तूफाने बदतमीजी' को दूर से ही न दुरदुरा दे। परन्तु सहृदय साहित्याचार्यजी ने मेरी विनीत विनती बडी उदारता से स्वीकार कर ली और अपनी ललित लेखनी की नोक से 'चिड़ियाघर' का उद्घाटन कर दिया। ऐसे पवित्र हाथो से दरवाजा खुलते ही लेखक का हृदय-सरोवर उत्साह-उमगो से भर गया और 'चिड़ियाघर' का 'जन्तु-जगत्' चह-चहाने लगा!

बस, इस सम्बन्ध में इतना ही करना था सो कर दिया। अब 'चिड़ियाघर' का दरवाजा खुला हुआ है। दर्शक गण आवें और उसे बे-रोक-टोक देखे, अगर कही कोई चीज पसन्द आ जाय तो उससे अपना मनोरजन करले।

शङ्कर-सदन
हरदुआगज
संक्रान्ति, संवत् १९८७

हरिशङ्कर शर्मा

त्रितीय संस्करण की भूमिका

पाठकों की सेवा मे 'चिडियाघर' का यह त्रितीय संस्करण उपस्थित करते हुए मुझे बडी प्रसन्नता होती है। सहृदय सज्जनों ने 'चिडियाघर' को जिस प्रेम से अपनाया वह मेरे लिये बडे ही गर्व-गौरव की बात है। साहित्य-महारथियो और पत्र-पत्रिकाओं ने मेरी इस तुच्छ कृति को आदर की दृष्टि से देखा, इससे मेरा उत्साह बहुत कुछ बढ गया है। मैं अपने इन मान्य महानुभावो के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

आशा है, सहृदय-समाज पहले सस्करणों की भाँति इस सस्करण को भी अपना कर उपकृत करेगा।

शङ्कर-सदन
आगरा
दीपावली, १९९२

हरिशङ्कर शर्मा

सप्तम संस्करण की भूमिका

'चिडियाघर' का यह सातवाँ सस्करण सहृदय-समाज की सेवा मे प्रस्तुत किया जा रहा है। पाठको ने इसे पसन्द किया, यह मेरे लिये बडे सौभाग्य की बात है। गुरुवर आचार्य्य पद्मसिह शर्मा ने 'चिडियाघर' का उद्घाटन करते हुए मुझे आदेश दिया था कि इसी प्रकार की एक पुस्तक और लिखो और उसका नाम 'पिंजरापोल' रखो। आचार्यजी के आदेशानुसार यह 'पिंजरापोल' नामक पुस्तक भी पाठको के सम्मुख आ चुकी है और इसका भी सहृदय-समाज ने बडे सद्भाव से स्वागत किया है। मैं इन तुच्छ रचनाओ को इस प्रकार 'प्रतिष्ठित' देख कर, सचमुच अपने को गौरवान्वित और सौभाग्यशाली समझता हूं।

"मुअर्रा हूं हुनर से मैं सरापा ऐब हूं साहब,
इनायत है अहिब्बा की अगर अच्छा समझते हैं।"

शङ्कर-सदन
आगरा
कार्तिकी, २०१५ वि०

हरिशङ्कर शर्मा

'चिड़ियाघर' का उद्‌घाटन

मधुर हास्य-रस के इने-गिने दो-चार लेखको मे, पण्डित हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न भी एक है। इनके हास्य-रस का रस-पान करने के लिए अनेक सहृदय पाठक-चातक उद्‌ग्रीव रहते है। हरिशङ्करजी के हास्य-रस की फुआरे मोह-निद्रा मे सोते हुओ की आँखे खोल देती है, अँगडाई लेते उठते ही बनता है। वे 'लीडर-विज्ञान' के विशेष रूप से विशेषज्ञ है, 'लीडर-शनास' है, उनके "शुतर गमजे" खूब समझते है। इस विद्या मे तो इन्हे कोई 'बेताल-पचीसी' का-सा बेताल सिद्ध हो गया है। बहुत तह की और पते की बात कहते है। 'लीडर-लीला' देख कर यह बात पाठक आसानी से समझ जायंगे। आजकल 'लीडर-लीला' का दौरात्म्य बहुत भयानक रूप से बढता जा रहा है। अनुयायियो की अपेक्षा लीडरो की संख्या कही बढ चली है। पुराने पौराणिक सिद्धान्तो के अनुसार प्रत्येक पदार्थ का एक-एक जुदा अधिष्ठातृ देव होता है, इस सिद्धान्त की सत्यता को आजकल की लीडर-लीला प्रमाणित कर रही है। लीडर लोग तो अपने काम की खूब समझते है, पर, अनुयायी (फालोअर) नावाकिफ है कि उन्हे क्या करना चाहिए, महाकवि 'अकबर' ने चेतावनी दी थी—

"मुरशिदो मे से तो हर इक जानता है अपना काम,
हाँ, मुरीद अब तक नहीं वाकिफ हुए हम क्या करें !"

आशा है, 'चिड़ियाघर' मे 'लीडर-लीला' पढ़कर वह भी कुछ अपना फर्ज समझ जायंगे। 'चिड़ियाघर' का सामान सुन्दर है,

कौतुक की सामग्री है। इससे हास्य-प्रेमी पाठकों का मनोरजन होगा और बहुत कुछ शिक्षा भी मिलेगी, यदि आँखे खोल कर देखेगे और समझ कर पढ़ेगे। 'हुक्के की हिस्ट्री' 'पशु-पक्षियों की पार्लियामेट' 'प्रैक्टिकल परमार्थ' 'भारतीय मुछमुण्ड-मण्डल' 'सजीव रोगो के अजीब नुसखे' 'पदवी पतुरिया', '१४४', 'चह-चहाता चिडियाघर' एक से एक बढ़कर चित्ताकर्षक है। हरिशङ्करजी की भाषा बडी चुस्त और चुभती हुई होती है, अनुप्रास तो इनकी भाषा का असाधारण गुण है, सानुप्रास भाषा लिखने मे तो हरिशङ्करजी लासानी है। अनुप्रास पर तो इन्होने कुछ जादू-सा कर रक्खा है, अपने आप बंधता चला आता है, इन्हे प्रयत्न नही करना पड़ता। 'चिडियाघर' भाषा की दृष्टि से भी और भावो के लिहाज से भी एक श्रेष्ठ और सुन्दर वस्तु बन गई है।

"भाषा भणित वस्तु भल बरनी,
कहत सुनत मंगल मुद करनी।"

आशा है, पाठक इसे चाव से पढेंगे और हरिशङ्करजी से अनुरोध करेगे कि वह एक 'पिंजरापोल' और प्रस्तुत करें, बचे-खुचे विचार-जन्तुओं को उसमें भर दे।

लीजिए, मैं अब इस भूमिका की रस्म अदा करके 'चिडिया-घर' को सर्वसाधारण के लिए खोलता हूँ—इसका उद्‌घाटन करता हूँ। जी भर कर सैर कीजिए।

काव्य-कुटीर
नायकनगला (बिजनौर)
अगहन सुदि, ७ सं० १९८७ वि०

पद्मसिंह शर्मा

आचार्यों की दृष्टि में

'चिड़ियाघर'

आचार्य्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी

'चिडियाघर' के लेख पढे। बडा मनोरंजन हुआ। गज़ब का व्यंग्य मिला। बडी गहरी चुटकियाँ ली गयी हैं। अनेक दृष्टियो से पुस्तक अनमोल है।

उपन्यास-सम्राट् श्री प्रेमचन्दजी

'चिडियाघर' की सैर करने में ख़ूब हँसी आई। कही-कही तो गिरते-गिरते बचा। 'लीडर-लीला' की तारीफ तो पहले भी कई दफा सुन चुका था, पर यहाँ इसे आँखो देख लिया। अब इस जन्तु को ज़रा देखूँ कि पहचान सकता हूँ। 'प्रैक्टीकल परमार्थ निराली चीज़ है। सारा 'चिडिया-घर' ऐसी ही आवाज़ो से गूंज रहा है। देखिये और हँसिये। हरिशकरजी व्यंग्य और हास्य के आचार्य्य हैं, यह मानना पडता है। अगर दिन काटे न कटता हो या काम करते-करते मन थक गया हो तो इस 'चिडियाघर' में चले आइए, दस-बीस कहकहे आएँगे और आप तरोताज़ा होकर फिर अपने काम में मसरूफ हो जायँगे।

महामहोपाध्याय श्री प० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा

'चिडियाघर' पढकर बडा आनन्द आया। हरिशकरजी के निबन्ध मुझे बहुत पसन्द हैं। मैं तो उन्हे उत्कृष्ट आदर्श मानता हूँ।

सम्पादकाचार्य्य श्री प० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी

'चिडियाघर' अपने ढग की निराली चीज़ है। इससे मनोरजन तो होता ही है, पर कुवासना नही उत्पन्न होती। भाषा की दृष्टि से यह 'चिडियाघर' बडे महत्त्व का है। जिसे अच्छी भाषा सीखनी हो, वह अवश्य इसे पढे। इससे आबाल वृद्ध, वनिता सबका मनोरंजन होता है।

● ●

चिड़ियाघर

चहचहाता 'चिड़ियाघर'

स्वप्न के सुखमय ससार मे, विश्व के विचित्र अद्भुतालय की—वाणिज्य-विलास, शिल्प-शाला, धर्म-धाम, समाज-सदन, राजनीति-निकेतन, अकिञ्चन-कुटीर, मजदूर-मञ्जिल आदि-सस्थाएँ देखते-देखते जब जी ऊब उठा तो अपने राम सीधे साहित्योद्यान की ओर सिधारे, और सोचने लगे कि चलो, इस शुष्कवाद के जलहीन जलाशय से निकलकर सरसता के सुन्दर सरोवर मे स्नान करे, झक्कड़ता के झाड़-खण्डो को झाड़कर सहृदयता के सुखद सुमनो की सुगन्ध सूघे। अहा! साहित्योद्यान का सुहावना द्वार देखने ही योग्य था। उसकी सुन्दर सुषमा का विशद वर्णन करने के लिए, कवि-कुल-कैरव-कलाधर कालिदास की वरद वाणी चाहिये। क्या पूछते हो ? साहित्योद्यान का दिव्य द्वार देखकर अपने राम चित्र लिखे-से रह गए! आँखे ठगी-सी ठिठक रही! चित्त चुपके-से चिपक गया!! पैरो ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। इतने मे ही उद्यान का अधिकारी आकर बोला—

"देखना है, तो आगे बढो, नहीं तो दरवाज़ा बन्द होता है।"

मैंने कहा—"फीस ?"

"फीस-वीस कुछ नही, केवल सहृदयता का 'सार्टीफिकेट' साथ रखिए। अच्छा, यह तो बताइये, पहले आप इस विशाल बाग के किस भाग की सैर करेंगे ?"

"मैंने यह बाग पहले कभी नही देखा, इसलिए समझ में नही आता कि आपके इस सवाल का क्या जवाब दूँ।"

"अच्छा, बढिये आगे, और जो इच्छा हो सो देखिये।"

यह कहकर उस आदरणीय अधिकारी ने मुझे प्रधान द्वार द्वारा अन्दर पहुँचा दिया। अजीब नजारा था, अद्भुत दृश्य दिखाई देता था; गुल्म-लता, तरु-वल्लियों की असीम शोभा का ठिकाना न था। सुहावने वृक्षों और सुन्दर सुमनो की अपूर्व छटा मन को मुग्ध कर रही थी। कोयलों की कूक और कबूतरों की गुटरगूँ ने 'समाँ' बाँध रक्खा था। जगह-जगह जलाशय भरे हुए थे, झरने झर रहे थे, नाले बह रहे थे और सोते हिलोरें मार रहे थे। जिधर निगाह उठती थी, उधर ही आनन्द का आधिपत्य दिखाई देता था।

उद्यान के अन्दर घुसते ही सामने एक चहचहाता 'चिडिया-घर' दिखाई दिया। मेरे हर्ष का ठिकाना न रहा! खुशी का खजाना मिल गया! आनन्द की गङ्गा उमड़ पड़ी! अन्धे को आँखें प्राप्त हो गईं। चलो, पहले इस 'चहचहाते चिडियाघर' की ही सैर करें, इसी की वर विचित्रता से अपने अतृप्त नयनों को तृप्त करें। पाटिया (साइन-बोर्ड) पर नागरी लिपि में कितने सुन्दर अक्षर लिखे हुए है, कैसा कौशल दिखाया गया है। साथी ने कहा—"अच्छा, आगे बढ़िये। देखिये—इस कमरे में हिन्दी का इतिहास सुरक्षित है, उसमें पुरानी लिपियों और

शिला-लेखो का सग्रह किया गया है। ठीक, परन्तु इन सब बातों को सोचने-समझने के लिये, न अपने राम के पास ओझाजी का हृदय है और न उनका मस्तिष्क! चलो, और आगे बढो।"

अच्छा! यह दूसरा कमरा है। इसमे चन्द वरदायी से लेकर भारतेन्दु तक के समस्त साहित्य-सेवियों की स्वर्गीय आत्माएँ, अपनी-अपनी कृतियो पर अटल आसन जमाये विराजमान है।

"और आगे बढो भाई, यह तो फुरसत मे देखने की चीजे है, एक-एक का अवलोकन करने के लिये महीनो और वर्षों चाहिएँ।"

अच्छा, यह कमरा क्या है? ओ हो!—इसमे तो सम्पादकों के पिजडे रक्खे है। वाह! यह बहार तो देखने ही लायक है। किसी की दुम से दावात बँधी हुई है, और कोई कान पर कलम रखकर कूद रहा है। किसी के पैरो मे पिनो की पैजनियाँ पड़ी है तो कोई पैसिल को पजो मे दबाए डोलता है, किसी की कैंची क़यामत ढा रही है तो कोई पोथियो का पुलन्दा चोच मे दबाए घूमता-फिरता है। कोई पछी पिंजडे मे पड़ा गरूर से गुर्रा रहा है और कोई बेचारा हाथ जोडकर 'हा-हा' खा रहा है। क्या ही विचित्र दृश्य है! कैसा अजीब तमाशा है! इन पिजर-बद्ध पक्षियों के कमरे के आगे क्या है? सवाददाताओ का सन्दूक, लेखको का पिटारा, ग्रन्थकारों की गठरी, समालोचको की टोकरी और व्याख्याताओ का बडल। अच्छा! इस गद्य-गली को छोडिये, पीछे—वापसी मे देखेगे, पहले पद्य-प्रासाद की ओर चले—उसकी रङ्गत देखे।

ओहो! यह है पद्य-प्रासाद! इसमे तो भाँति-भाँति के कवि-कारण्डव और काव्य-कपोत किलोल कर रहे है। दूर-दूर के पद्य-प्रिय पक्षी प्रस्तुत है। यहाँ पखेरुओ के पख-प्रदर्शन से खूब आनन्द

आता होगा, बडी रौनक रहती होगी। अजी जनाब! रौनक की क्या पूछते हो, 'बहिश्त'-सी दिखाई देती है। फिर, आज तो इन कवियो का बहुत बड़ा सम्मेलन होने वाला है, खूब 'चोच-भिड़न्त' होगी! जरा देखना तो सही, कैसा मजा आता है। हाँ, हजरत! हमारे लिये तो यह बिलकुल ही एक नई बात होगी। अभी साढे तीन बजने मे पन्द्रह मिनट बाकी है। आइये, यहाँ घास पर बैठ जायँ और तीन-चार घण्टे इस काव्य-कौतुक का आनन्द लूटे।

ठीक साढे तीन बजे कवि-सम्मेलन शुरू हुआ। सभापति का आसन गद्यपद्याचार्य 'गुरुवर गरुडदेव' ने ग्रहण किया। आपने अपने भावपूर्ण भाषण के अन्त मे कहा—

"महाशयो, सौभाग्य से इस पद्य-प्रासाद मे विविध प्रकार की बोलियाँ बोलने वाले, कृतविद्य कविवर उपस्थित है। सबको समान रूप से चहकने-चटखने और चहचहाने का मौका दिया जायगा। बढिया बोलने वालो को, सोने-चाँदी की पैजनियाँ पहनाई जायँगी और कण्ठ मे कलाबतून के कण्ठे डाले जायँगे। देखना, गम्भीरता और सभ्यता हाथ से न जाने पावे।"

इतने ही मे कतिपय 'साहित्य-ठूँठो' ने अपनी विद्वत्ता का बखान करते हुए, सभापति के सारगर्भित भाषण पर बड़बड़ाहट शुरू की! कर्णकटु काँव-काँव मचाई!—अपनी प्रदग्ध प्रतिभा की प्रचण्डाग्नि से काव्य-कलिका को झुलसाना चाहा। गुरु गरुड़जी के गौरव-गुलाल पर गन्दगी के गट्ठर गिराने की चेष्टा की। गुबरीला पद्म पर प्रभुता पाने का प्रयास करने लगा, और स्यार सिंह पर दुलत्ती झाड़ने को समुत्सुक हुआ! परन्तु सब निष्फल! सब व्यर्थ! उपस्थित कवि-वृन्द ने सारे 'साहित्य-ठूँठो का' ठाठ बिगाड दिया, बोलती बन्द करदी! जिससे फिर अनर्गल आलाप करने का हौसला ही न हुआ।

हाँ, तो सबसे पहले सभापतिजी के आदेशानुसार, प्रार्थना-पन्थी 'कवि ककजी' ने अपनी कविता सुनानी शुरू की, आपके खड़े होते ही पखों की फडाफड और तुण्डो की तडातड़ से गगन-मण्डल गूँज उठा। आपने आँखे मीच और गला भीच कर नीचे लिखे पद्यो का पाठ प्रारम्भ किया—

> **अखिलेश, सर्वेश, प्रजेश पालकम्,**
> **विश्वेश, कुल्लेश, क्लेश घालकम्।**
> **मोटर, घडी, इञ्जन आदि चालकम्,**
> **विपत्ति, सङ्कट विकट्ट टालकम्॥**
> × × × ×
> **रघुराज व्रजराज गणेश गौरी।**

श्री ·· · ···

यहाँ सभापति श्रीगरुडदेवजी ने कवि को रोककर कहा—"महाशय, आप अपनी कविताएँ सुनाते है या 'विष्णुसहस्रनाम' का पाठ करते है ? काव्य-कानन मे किलोल करने आये है, या साम्प्रदायिकता की सडक पर सपाटे भरने चले है ?" इस पर कवि ककजी अप्रसन्न हो गये और क्रुद्ध होकर कहने लगे—"जब तक मेरी 'प्रार्थना-पञ्चशती' समाप्त न हो जायगी तब तक आगे न बढूंगा।" अस्तु, सभापतिजी के आदेशानुसार आपको बैठ जाना पडा।

कवि कङ्कजी के प्रस्थान करते ही रसराज-रसिक 'केकी कविजी' की कुलबुलाहट प्रारम्भ हुई। आपकी अदा निराली थी। कभी नाक पर हाथ रखते थे, कभी कर से कमर टटोलते थे। कभी लचकते थे, कभी मचकते थे, कभी फुदकते थे, कभी कुदकते थे, कभी भृकुटी के भाले चलाते थे और कभी कटाक्ष के कारतूस छोडते थे। आपने अपने रङ्ग मे अद्भुत आलाप करते हुए कहा—

कामिनी कबूतरी के कलित कलेवर को
देख-देख पंछियों के पंख झड़ जाते हैं।
श्वेत वक-वृन्द की तो बात ही न पूछो कुछ
काले-काले कौए भी पिछाड़ी पड़ जाते हैं।
उद्धत उलूक खोजते हैं रात-भर उसे
गिद्ध 'धृष्टनायक' की भाँति अड़ जाते हैं।
आँख, नाक, चोंच, पंख, पग-प्रतियोगिता में
कवियों के सारे उपमान सड़ जाते हैं।

केकी कवि की इस शृङ्गारमयी कविता से सारे कवि-समाज में हलचल मच गई, चारो ओर से 'अश्लील'! 'अश्लील'! की आवाजे आने लगी। सैकड़ो कबूतरियाँ कवियो को कोसती हुईं उड़न्छ हो गईं! शोक! "देवियों का ऐसा निरादर! इतना अपमान! बन्द करो इस कुत्सित कवि-सम्मेलन को! रोको ऐसी गन्दी गढन्त को! मत बकने दो इस प्रकार की बेजोड़ बाते"—यही चर्चा सब ओर से सुनाई पड रही थी।

बड़ी कठिनाई से प्रेसीडेण्ट मिस्टर गरुड़देव ने शान्ति स्थापित की, और बड़े बलपूर्वक कहा—"आगे से ऐसी बेहूदी और अश्लील कविताएँ कोई न सुनावे। हाल मे ही इस प्रकार के असदव्यवहार से श्रीमती कपोत-कान्ताओ को मर्मान्तिक वेदना पहुँची है, जिससे हमे भी बडा दुःख है, और होना ही चाहिए। आशा है, आगे ऐसा स्वेच्छाचार न होगा।"

इसके पश्चात् धर्मध्वजी कवि 'बगुलाभक्तजी' उठे। आपके शब्द-शब्द मे साम्प्रदायिकता की सनक और कट्टरता की कड़क दिखाई देती थी। सबसे प्रथम आपने डबडबाती हुई आँखो और गिड़-गिड़ाती हुई वाणी से धर्मप्राण श्रोताओ से अपील करते हुए नीचे लिखी कविता पढ़ी—

छूत-छात छोड़ना न भूल करके भी भाई
पतितो, अछूतों को न उठने उठाने दो।
विधवा-विवाह करना है घोर पाप, इसे
कर्मवीरो, कभी कल्पना में भी न आने दो।
बिछुड़े हुओं को अपनाना नीचता है निरी
ऐसी अवनति का न हुल्लड़ मचाने दो।
धर्म को विसार कर जाति को जिलाओ मत
कल मरती हो उसे आज मर जाने दो।

वृद्ध वशिष्ठ बगुलाभक्तजी की कविता से सभा-मण्डप मे हर्ष-विषाद का तुमुल-युद्ध छिड गया। सुधारक-दल का कोप-कोदण्ड तन गया, किन्तु कट्टरपन्थियो ने खुशी के नगाडे पीटने शुरू किये। सुधार और बिगाड के बीच खूब 'कुड्मधूँ' हुई। चोचो की चेंचें और पखो की फडफडाहट ने प्रशान्त वायु-मण्डल विलोडित कर दिया। गरुड़देव फिर उठे और अपने भाषण के आकर्षण से, येन केन प्रकारेण, बडी कठिनतापूर्वक शान्ति स्थापित करने में समर्थ हुए।

थोड़ी देर बाद सुधारक-दल के कवियो ने फिर रामरौला मचाया और सभापतिजी से बड़े आग्रहपूर्वक कहा—"अबकी बार सुधारको के आधार और उन्नति के अवतार प्रसिद्ध समाज-संशोधक कविवर 'काककिशोरजी' को कविता पढने का अवसर दिया जाय।" 'अवश्य दिया जाय', 'जरूर दिया जाय', 'फौरन दिया जाय', 'जी खोलकर दिया जाय', 'क्यो न दिया जाय ?' की आवेशपूर्ण ऊंची आवाजो ने गरुडगोविन्दजी को मजबूर कर दिया, और उनकी आज्ञा से कविवर काककिशोरजी ने नीचे लिखी कविता सुनानी शुरू की—

छूत-छात का भूत भगाकर, सब के सँग खालेंगे हम,
उन्नति की घुड़दौड़ मची है, पीछे नहीं रहेंगे हम।
विधवाओं के व्याह करेंगे, बिछुड़ों को अपनाएँगे,
जात-पाँत का तन्तु तोडकर, एक भाव दरसाएँगे।

"बैठ जाइये! बैठ जाइये! विश्व-विनाशक विषैले वायु से इस विशुद्ध वातावरण को विषाक्त न बनाइये, बैठ जाइये! इन तरक्की के तरानों को सुनकर कानो के परदे फटे जाते है, हिम्मत-वालों के हौसले घटे जाते है, धर्मप्राणों के पर कटे जाते है, बैठ जाइये!" निदान कट्टर कवियों की 'काँव-काँव' ने काक-कवि का कलेजा दहला दिया! कविता की कमर तोड़ दी! फसाहत की हँडिया फोड दी! विरोध का बेडौल बवडर देखकर बेचारे काक-कवि अपना-सा मुँह लेकर अवाक् बैठ गये।

सभापति श्रीगरुड़देवजी बोले—"महाशयो, मैं पहले ही कह चुका हूँ कि आप लोग कमनीय काव्य-कानन को छोडकर सम्प्रदायवाद के बीहड वन मे न भटकिये, साहित्य-सलाप त्याग कर मत-पन्थो से न अटकिये। इससे सभा मे अत्यन्त असन्तोष और असीम असद्भाव उत्पन्न होता है। समाज-सुधार का स्थान यह नही है, उसके लिए आपको सशोधक संस्थाओ से सहायता प्राप्त करनी होगी। आशा है, आगे जो कविजन अपनी कविताएँ सुनाएंगे, उनमे ऐसी वाहियात बाते न आने पाएँगी। अस्तु, अब सुप्रसिद्ध देशभक्त श्रीयुत 'कीर कविजी' अपनी रचना सुनाएँगे, आप लोग ध्यानपूर्वक सुने।" इसके पश्चात् स्वतन्त्रता-सेवी श्रीयुत् कीर कवि ने दृग दमका तथा चोंच चमका कर नीचे लिखी रागनी रागी—

आज़ाद हो हमारा हिन्दोसतान यारो,
मिल-जुल के देशवासी, ऐसी सुविधि विचारो।

सब जेल में पड़ो तुम, हक के लिए लड़ो तुम,
आपत्ति मे अड़ो तुम, पर कौम को उबारो।
खुश होके मार खाओ, भारत के गीत गाओ,
हँस बेड़ियाँ बजाओ, दुखिया के दुःख टारो।

"वाह सभापतिजी, वाह! क्या आपने हमे यहाँ प्रीजन के पिंजडे मे अथवा कारागार के कठहरे मे बन्द करने को बुलाया है? भाड मे जाय भारत और भट्टी मे झुके आजादी! अजी जनाब! हम यहाँ कौम का उद्धार करने आए है या काव्य-कानन मे कुदकने-फुदकने! याद रहे, अगर किसी 'सी० आई० डी०'-वाले ने सुन लिया तो बची-खुची स्वाधीनता भी नष्ट हो जायगी! लेने के देने पड़ जायँगे! हमे इस बकवाद की जरा भी जरूरत नही है, अपने राम तो आशियानो मे पख पसार कर सोते और आनन्द के बीज बोते है।"

कीर कवि की इस कडी कविता को सुनकर व्योम-विहारी गरुडदेवजी को भी गुस्सा आगया। उन्होने 'लायलटी' पर लम्बा लेक्चर झाडते और क्रोध से मुँह फाडते हुए कहा—"कविवरो, तुम्हे इस व्यर्थवाद से क्या? हिन्दुस्तान के आजाद होने न होने से तुम्हारा प्रयोजन? तुम तो अपने उद्यान मे अब भी स्वाधीन हो, और आगे भी रहोगे। अगर तुम्हारा अभिप्राय खमण्डल मे खलबली मचाना है, तो याद रक्खो मै खगराज हूँ, ऐसा कभी न होने दूँगा। क्या तुम मेरा साम्राज्य छीनना चाहते हो? धिक्कार है तुमको, और तुम्हारे विचित्र विचार को!"

सभापति श्रीगरुडजी के इतना उच्चारते ही चारो ओर से "छिमान् महाराज!", 'छिमान् महाराज!!' की आवाजे आने लगी। कीर कवि ने भी हकीर होकर आप से क्षमा याचना की।

तदनन्तर सभापतिजी के आदेशानुसार सॉग-सनेही कविवर

'कुलंगजी' खडे हुए। आपने कडाके की आवाज मे झड़ाके से अपना अद्भुत आलाप आरम्भ किया—

बड़ों की बात बड़ी है, घड़े में पड़ी घड़ी है,
है ऊदल कहा विचारो, भयो जो आगे ठारो,
न देखो रूप हमारो—
और मारदेहु मर जाहि ताहि; डर जाहि न
हिम्मत हारो—धिनाधिन ताक्थेई ता।

कुलंग कवि की करारी कविता सुनते ही सभा मे सन्नाटा छा गया! उपहार मे पैजनियो के पुलन्दे पड़ने लगे, 'वाह-वाह' की धूम मच गयी! 'वंसमोर' का शोर होने लगा। एक-एक पंक्ति अनेक बार सुनी जाने लगी। सभापतिजी सोचने लगे, कही इस घोर वीर रस की कविता से उत्तेजित होकर कोमल काय कवि-कुमार आपस मे ही सिर-फुटौअल न कर डाले अतएव आपने कुलग कवि को अधवर मे ही बैठा दिया, जिससे सहृदय काव्य-मर्मज्ञ उनकी क्रान्ति-कारिणी कलित कविता सुनने के लिए मुँह बाये रह गये!

इसके बाद पर-उपदेश-कुशल कवि 'कारण्डवजी' अपनी कविता-कौमुदी की अपूर्व छटा छिटकाने के लिए खडे हुए। आप बहुत देर से व्याकुल बैल की तरह रस्सा तुडा रहे थे। आज्ञा किसी अन्य कवि को दी जाती थी, उठ आप खड़े होते थे। खैर, अबकी बार राम-राम करके आपका अवसर आ ही गया। कारण्डवजी ने करताल कर मे लेकर मूछे मरोड़ते, आँखे सिकोडते और तान तोड़ते हुये, साफे को सम्हाल-सम्हाल कर, ऊँची आवाज से, नीचे लिखी कविता कथ कर सुनाई—

धरम के कारणें जी, भाइयो! तन-मन-धन सब दे दो।
रच्छा करो धरम की धुन ते, धरम बड़ो है भाई,

घरम के कारन घरमदत्त ने देखो जान गँवाई,
घरम के कारणों जी..................................
घरम-घरम की धूम मचाओ, घरम-वुजा फहराओ,
घरम ओढलो, घरम बिछालो, घरमी सब बन जाओ,
घरम के कारणों जी, घरम के कारणों जी—
घरम के कारणों जी ; भाइयो, तन-मन-धन सब दे दो।

कवि कारण्डवजी अभी अपनी भूरि भाव-भरित कविता की दो-तीन कडियाँ ही पढने पाए थे कि लोग सरसे साफा बाँध, मोटा सोटा ले और गले मे गुलूबन्द लपेट कर धर्म पर बलिदान होने को आ खडे हुए! 'जीवन-दान', 'जीवन-दान' की आवाजे आने लगी, 'धन्य-धन्य' की धूम मच गई! सभापतिजी ने भी, कारण्डवजी की चोच चूमकर स्पष्ट शब्दो मे कहा—"भाई, बस, इस आधुनिक युग मे आप ही एक कामयाब कवि है! विराजिये, इस समय शीघ्रता है। आपकी 'पद्य-पाढन्त' के लिये तो पूरे पाँच घटे दिये जायँ, तब कही श्रोतृ-समुदाय की सतृप्ति हो। ओ हो!—आप की कविता क्या है, 'फायर-ब्रिग्रेड' का इन्जन या तूफान-ट्रेन का भोपू है। धर्म, जिस पर जगत् स्थिर है, उसके आप जैसे परम प्रवीण प्रचारक धन्य हैं!"

कवि कारण्डवजी की 'कुकड़ू-कू' समाप्त होते ही, घटना-घन घमण्ड घोघा घुग्घू घासलेटानन्दजी अपनी अकड़ मे घोर घोषणा करते हुए, उसी प्रकार बिना बुलाए पञ्च बन मञ्च पर आ आरूढ हुए जिस प्रकार 'साइमन-सप्तक' भारत के भाल पर आ धमका था! सभापति श्रीगरुडदेवजी ने गुस्से से गुर्राते हुए कहा—"अच्छा, पढिये, पहले आप ही पढिये।" तब श्री घासलेटानन्दजी ने अगाई-पिछाई तोड़, और कुण्डे-कुण्डी फोड़

कर, साहित्य-क्षेत्र का सुविस्तीर्ण मैदान मार, महा मोद मनाते हुए, नीचे लिखा अद्भुत आलाप करना शुरू किया—

उस भ्रष्ट-भवन की कथा सुनो, वेश्याओं के अड्डे देखो,
लो, लोट 'लाटरी' के लुटते, बाजारों में सट्टे देखो।
लड़कों पर प्यार करें टीचर, वह चाकलेट-चरचा सुनलो,
विधवा व्यभिचार-प्रचार करें, सो सुनो, शोक से सिर धुनलो।
हाँ एक-एक करके तुमको, सब विस्तृत बात बताता हूँ,
परदे में पाप करें कैसे? सो सब तुमको समझाता हूँ।

श्रीघासलेटानन्दजी की अभी भूमिका भी समाप्त नही हुई थी कि काक, कंक, कारण्डव, कीर आदि कवियो ने कोपपूर्ण 'कॉव-कॉव' करनी शुरू कर दी। "नही, नही, हम यहाँ ऐसी विचित्र विधि सुनना नही चाहते। घासलेटानन्दजी बैठ जाइये! इस सारहीन सिखावन से ससार को बख्शिये।" इसके विपरीत दूसरे कवियो ने कहा—"कहिये, कहिये, जरूर कहिये! बराबर सिलासिला जारी रखिये। जाति-जागृति का जतन जितनी जल्दी जनता को जताया जाय उतना ही अच्छा है। कहिये, कहिये, घासलेटानन्दजी कहिये"—की आवाजो ने कविवरजी का नाक मे दम कर दिया। वे 'हॉ'-'ना' की खीचातानी मे 'त्रिशकु' की तरह बीच मे ही लटक गए। युगल चुम्बक के मध्य पडी सुई की तरह सिटपिटाने लगे! अडे या बढें, हटे या डटे, चहके या बहके, जमे या रमे—उन्हे कुछ न सूझ पडा। अन्त मे श्रीसभापतिजी के आदेश से आप अधवर में ही बैठ गए और विरोधियो की बुद्धि पर बड़बडाते हुए अपनी अक्ल की स्तुति करने लगे।

इतने कवियो की कविताएँ सुनी जाने के बाद 'टकापथ-प्रवर्त्तक' कविवर 'कुक्कुटराज' काव्य-कानन मे कूदे। आपके

'कुकड़ूकूँ' करते ही जनता ने हर्ष-ध्वनि की, और उत्सुकता के साथ वह उनकी ओर देखने लगी! कुक्कुट कविजी 'बहर-ए-तवील' में बलन्द बाँग देते हुए बोले—

वोट दे दो रे, भाई, भिखारीमल को।
लोगों की बातों में हरगिज़ न आओ,
खद्दर न पहनो, न जेलों मे जाओ;
है, चुङ्गी-चुनाव चलो कल को,
वोट दे दो रे, भाई, भिखारीमल को।
चढ़-बढ़ के लाला ने दावत खिलाईं,
कोठी, हवेली, दुकानें बनाईं,
सीधे हैं, जानें न छल-बल को—
वोट दे दो रे, भाई, भिखारीमल को।

अहा! कुक्कुट कवि की इस परोपकार-प्रवृत्ति पर सब कवियों ने साधुवाद की सिला सरकानी शुरू की, 'मरहबा' की मटकी फोड़ दी और 'वाह-वाह' की बाँह तोड़ दी! "धन्य है ऐसे अशरण शरण कविराज! देखिए न, सेठजी के लिये, आपके दराज दिल-दालान मे कैसे-कैसे प्रेम के पीपे भरे पडे है। वाह! वाह! खूब!"

इसके अनतर सभापतिजी ने कविरत्न 'क्रौञ्चजी' से कविता सुनाने को कहा। परन्तु वह बोले—"जब तक मेरे लिये आनन्द-पूर्वक आसीन होने को विशुद्ध व्यास-गद्दी न दी जायगी, तब तक मैं अपनी कथा कदापि नही सुना सकता। हाँ, हारमोनियम और तबले की भी व्यवस्था करनी होगी।" सभापतिजी ने बात की बात मे सब समुचित प्रबन्ध कर दिया। तब कविजी ने ऊँची आवाज से नीचे लिखी कविता गाकर सुनाई—

तब बोले साधू सुबुध, सुनो सभी धर ध्यान,
कथा आज की का विषय, है अध्यातम ज्ञान।

ससार दुखो का सागर है, आओ, मिल-जुल सब स्वर्ग चलें,
सानंद रहे, नंदन-वन में, लखि-लखि हमको सब हाथ मलें।
हम धर्म-ध्वजा की धज्जी हैं, उपकार-'कार' के 'टायर' हैं,
कविता-कुर्सी के पाये हैं, सारङ्गी के सब 'वायर' हैं।
अब उठो, बाँध लो सब बिस्तर, उस अमरपुरी के जाने को,
तुलसी, केशव और सूर जहाँ, आएँगे हाथ मिलाने को।

क्रौञ्च कवि की कविता सुनकर लोग मारे क्रोध के कॉपने लगे। "आया कही का कठमुल्ला! हमे स्वर्ग ले जाना चाहता है। अरे पहले इस दुनिया का आया-गया तो देख ले, यहाँ तो विजय का बैंड बजादे, तब कही स्वर्ग-नरक का नम्बर आएगा। धिक्कार! धिक्कार! ऐसी कातिल कविताओ की जरूरत नही है। सभापतिजी, बन्द कीजिए! वैराग्य के इस विषैले विषधर को बिल मे ही बिलबिलाने दीजिये। उपरामता के उजबक उल्लू को प्रतिभा के प्रकाश मे न आने दीजिये।"

बूढे सभापतिजी को क्रौञ्च कवि की कथा मे बड़ा आनन्द आया, आपने बार-बार चोच चलाई और गरदन हिलाई। परन्तु जनता के वैराग्य-विरोधी होने के कारण क्रौञ्चजी की मुख-मढी पर, मजबूरन '१४४ लीवर' का ताला ठोक देना पडा।

इस समय सभापतिजी ने कहा—"महाशयो, वक्त अधिक हो गया है, इसलिए कविवर 'कोकिलकुमार' और 'कुल्लूक' कविराज इन दो कवियों को अपनी-अपनी कविताएँ सुनाने का और अवसर दिया जायगा। बस, फिर पदक-पुरस्कार की सूचना देकर सम्मेलन समाप्त हो जायगा। अब 'प्रतिबिम्ब-पन्थी' काव्य-कानन-केसरी कवि 'कोकिल-कुमारजी' अपनी कविता सुनावे और अपने काव्य-कल्पतरु की छबीली छाया से सारे सभ्य-समाज को सुख पहुँचावे।" कोकिल-कुमारजी ने अपनी निगूढतम रुचिर

रचना को सुनाते-सुनाते, सब लोगो को अज्ञेयवाद-वारिधि में डुबकी लगाने का आनन्द प्राप्त कराया। कोकिल-कुमारजी ने अप-टू-डेट फैशन की फबीली फसाहत के फन्दे मे फँसकर नीचे लिखी अलौकिक कविता पढो—

विरद वाद्य मृदु मन्द अचलता के हगता अञ्चल में,
सुस्मित मत्त विस्मृत बाला के अनुनय अन्तस्तल में,
अभिधा की अनन्त आभा में सविधा के साधन में,
विभावरी, आभरी, सनिलभा के उदोत आनन में।

× × ×

सुरति सदय सन्दर्भ सुसंयत नय नवधा नागर में,
विश्व-विमोहन विपुल व्यथा के प्रभुता पाशु पगर में,
वरद विभा के वक्षस्थल में मृग-मरीचिका तट पर,
तरुणी के घटना-घूँघट पर तरंगिणी के तट पर।

× × ×

सौख्य सुधामय मनस्विता में, मानहीन मानस में,
भौतिक तारतम्य सत्ता के पुण्य प्रेम पारस में,
प्रवर्त्तिता प्राञ्जलि नलिनी के नव नीरव गायन में,
सभ्य, सुरम्य, गम्य कानन में प्रतिभापूर्ण पवन में।

कवि कोकिल-कुमार की दार्शनिकता देखकर सारे सभासद दग रह गये, सब लोग अपनी अडियल अक्ल को धिक्कारते हुए उनकी पुण्य-पक्तियो की प्रशसा करने लगे। 'धन्यवाद' के धुँगार और 'वाह-वाह' के बघार से सारा समाज सौरभित हो उठा!

सभापति श्री गरुडदेवजी तो इस कविता के परम दार्शनिक तत्त्व को समझने के लिए समाधि लगा गए, परन्तु तो भी यह नितान्त निगूढ-'रहस्य' उनके महा मस्तिष्क मे न आया। यहाँ तक कि उनकी प्रदीप्त प्रतिभा पर कविता के आध्यात्मिक अर्थ

की 'छाया' भी न पड़ी। अन्त में आप निराशावाद के वायु में बह-कर आगे बढ़े और "खैर" कहकर 'श्रीकुल्लूक' कवि से पद्य-पाठ करने की प्रार्थना की।

कुल्लूक कविजी अपनी कलम-कटारी और स्वच्छन्दता की आरी लेकर कविता-कामिनी के कलित कलेवर की ओर झपटे! वह बेचारी बलात्कार से बचने के लिये "त्राहि-त्राहि" करने और बिना आई मरने लगी। करुणा का सागर उमड़ उठा, और दयालुओ का दिल घुमड़ उठा! अस्तु, सबसे प्रथम कविवर कुल्लूकजी ने जनता को नीचे लिखा स्वच्छन्द छन्द सुनाकर दोनो हाथो से 'वाह-वाह' बटोरनी शुरू की, आप अपनी शान मे बोले—

खट्वा !

ओहो ! चतुष्पदी, निष्पदी तथा—
निर्भ्रान्त, अलक्षिता;—एवम् सापेक्ष सत्ता, सुरम्या—
महत्त्वमय—'मत्कुण'-सेविता
'तक्षा' एवम्—
रथकार.................'शयनाधिकार संयुक्ता
सम्पृक्ता—सुकीर्तिता !
सुधीन्द्र, 'रज्जु'—'रसरी' !!
रता—नता; एवम् 'अवनता' !!!

कुल्लूक कवि की वदन-वाँवी से क्रान्ति-कारिणी कविता-काकोदरी के निकलते ही सारे कविसमाज मे आनन्द की आँधी आ गई! प्रसन्नता का पुल टूट पड़ा! साधुवादो का पजावा लग गया! "वाह कुल्लूकजी, क्या कहने है? आपने तो छन्द-छैला की छाती मे छुरी भौक दी, पिंगल के पिटारे पर पत्थर पटक दिए, अलकार अलवेले की अतड़ियाँ निकाल ली, रस में राख

मिलादी और भावो को भट्टी मे भून दिया।"

बड़ा ऊधम मचा, पार्टीबन्दी के पटाखे और गुट्टबाज़ी के गोले छूटने लगे। वाग्वाणों का वर्षा तथा विरोध के बवडर ने नाक मे दम कर दिया!

सभापति श्री गरुडदेवजी इस काव्य-विप्लव को देख कर दङ्ग रह गये! कुल्लूक कवि की कविता हुई या विद्रोह की बारूद जल उठी! इसे कवि-सम्मेलन कहे या 'अनारकी' का अड्डा! सहृदयता है या सगदिली ? शान्त! शान्त! मित्रो, शान्त! सज्जनो, शान्त!—देखो, कवि-सम्मेलन मे कविता-कामिनी पर अत्याचार न करो, इस अनघा अबला को अपने आवेशपूर्ण कोप-कुल्हाडे का दुर्लक्ष्य न बनाओ। ठहरो, सुनो! मैं अपना अन्तिम भाषण स्थगित कर पदक-पुरस्कार की घोषणा करता हूँ—

"कविराज कङ्कदेव, कविरत्न क्रौञ्च तथा कविवर कारण्डव-जी इन तीन कविवरो की कविता सर्वोत्तम रही, इन्हे रत्न-जटित हारो की लडियाँ तथा स्वर्णमय पैजनियाँ प्रदान की जाएँगी। अब सबको धन्यवाद देकर सभा विसर्जित होती है।"

सभापतिजी की उपहार-घोषणा सुनते ही चारो ओर से "और हम ?" "और हम ?" का तूफान उठ खडा हुआ। "इतने कवियो मे से केवल तीन! ऐसा अत्याचार! इतना अन्धेर! यह जुल्म!! पकडलो पक्षपाती प्रेसीडेण्ट को, मारो मनहूस को, फोड दो खोपडी, तोड दो तोमडी! आया कही का साहित्य-सिरकटा! देखो, भागा, दुम दबाकर भागा, मुँह छिपा कर निकला,—पकडो-दौडो, निकल न जाय, उड न जाय, गर्दन पकड लो, क्या हमने कविताएँ नही सुनाई ? हमने दिमाग का सेरो खून खर्च नही किया ? क्या हम कवि नही है ? हमको पुरस्कार क्यो नही ? मारो, मारो, देखना

कही भाग न जाय ।' भागा, पकड़ो, पकड़ो !" निदान इस समय कवि-सम्मेलन में ऐसा धूम-धड़ाका हुआ, ऐसा शोर-सनाका मचा, इतना तूफान-ए-बदतमीजी उठा कि अपने राम की निद्रा टूट गई, सारा स्वप्नमय साहित्य-संसार नष्ट हो गया ! अदृश्य जीवन के छायावाद के बदले दृश्यमान जगत् का जड़वाद दिखाई देने लगा । कवि कारण्डवो की कल्पना कुरगी की कुचालो के स्थान पर दुरगी दुनिया सामने आ गई । उठा, शौच-बाधा से निवृत्त हुआ; कलेवा किया और अपने काम में लग गया ।

लीडर-लीला

लीडर एक खास किस्म का समझदार जन्तु होता है, जो हर मुल्क और मिल्लत मे पाया जाता है। उसे कौम के सर पर सवार होना और सभा-सोसाइटियो के मैदान मे दौडना बहुत पसन्द है। उसकी शक्ल-ओ-सूरत हज़रत इन्सान से बिल्कुल मिलती-जुलती है। वह गरमियों मे अक्सर पहाडों पर किलोल करता मगर जाडो मे नीचे उतर आता है। देखने मे लीडर सादा-सा दिखाई देता है, पर हकीकत मे वह वैसा नही है। खाने की चीजो मे उसे सेव, सन्तरा, अगूर, केले, अनार वग़ैरह कीमती फल ज्यादा पसन्द है। दूध तो उसकी ख़ास गिजा है। मौका पड़ने पर गल्ले के पूडी-पकवान भी गले मे उतार लेता है, मगर बहुत ख़ुशी से नही !

कहने को तो लीडर जन्तु है, मगर उसमे खुददारी का जजबा खूब जोशजन रहता है। वह अपने खयाल के खिलाफ न कुछ सुन सकता है, और न पोजीशन को कम होते देख सकता है। जिस तरह सरकार को सोते-जागते, उठते-बैठते, 'पीस एण्ड आर्डर' (शान्ति और सुव्यवस्था) का ध्यान रहता है, उसी तरह लीडर अपनी तकरीर और तारीफ अख़बारो मे छपी देखने के लिये फिकरमन्द नजर आता है। वह औरो को अपने पीछे घसीटता मगर खुद किसी के साथ खिचड़ना पसन्द नही करता। जिस वक्त इस अजीब जन्तु के जिगर मे कौम का दर्द उठता है, उस वक्त वह इनता बेताब हो जाता है कि कभी तारघर की ओर दौडता है और कभी डाकख़ाने की ओर कबड्डी भरता है। ज्यादा दर्द होने की हालत मे उसकी बेचैनी का ठिकाना नही

रहता। यहाँ तक कि बडे-बडे मजमों में खडा होकर बेतहाशा चीख़ता-चिघाडता है। टेबुल पर हाथ मारता है और जमीन पर पाँव फटकारता है। आँखें सुर्ख़ कर लेता और दाँत पीसने लगता है। मुँह बनाता और हाथ घुमाता है। इधर को झुकता है और उधर को झूमता है। इसकी ऐसी हौलनाक हालत देखकर लोग उसके पास पानी या दूध का प्याला रख आते है जिसे वह चुस्की ले-ले कर पीता मगर चीखना-चिल्लाना वन्द नही करता।

कभी-कभी जब इस जन्तु की परेशानी, 'खूँख्वारी' मे तबदील हो जाती है तो उसके लिये उसे मियादे मुकर्रंरा के लिये लाल फाटकके बडे बाडे मे वन्द रहना पडता है, जहाँ न हस्ब ख्वाहिश दाना-चारा मिलता है और न मजेदार मैदान ही नसीब होता है। इस दुनिया में आकर पहले तो लीडर गरजता-गुर्राता है, मगर कुछ दिनो बाद उसकी हालत पालतू बकरी की तरह हो जाती है।

यह अजीब जन्तु अपने पाँवो पर चलना बहुत कम पसन्द करता है। रेल के गुदगुदे गद्दे और मोटरो के मुलायम तकिये देखकर उसकी तबियत बागबाग हो जाती है, हवाई जहाज की हवा खाने और उसी मे इधर-उधर घूमने के लिये वह अत्यन्त उत्सुक दिखाई देता है। घटिया सवारियो पर सवार होना उसे अच्छा नही लगता बल्कि, वह वैसा करना 'कसर-ए-शान समझता है।

लीडर मे एक बडी खसूसियत है। अपने बुलावे की डाक द्वारा सूचना पाकर उसकी 'सेहत ख़राब' हो जाती है और 'अदीम-उल-फुरसती' सामने आजाती है। मगर ज्यो ही अरजेण्ट टेलीग्राम पहुँचा त्यो ही वह तन्दुरुस्त हुआ और उसने अपनी रवानगी का तार खटखटाया! दुनिया इधर से उधर

हो जाय पर लीडरी तार का कुतार न होना चाहिये। अगर रवानगी का तार पा बहुत-से लोग, फूल-माला लेकर, 'इस्तकबाल' के लिये हवाई अड्डे या रेलवे स्टेशन पर नही पहुँचते, तो लीडर बुरी तरह बडबड़ाता और बिदक जाता है। कभी-कभी तो उलटा वापस होते हुए भी देखा गया है।

लीडर जन्तु सड़ी-गली हवेलियों मे रहना पसन्द नही करता। उसे फर्स्ट-क्लास कोठी के बिना चैन नही मिलता और न नीद आती है। वह बाते करने मे बडा कजूस होता है, छोटे लोगों को तो पास भी नही फटकने देता। हाँ, कुछ बडे आदमियो से, घडी सामने रखकर, थोडी देर, गुफ्तगू करने मे ज्यादा हरज नही समझता।

ओहो! जिस समय इसे '१४४' नम्बर की लाल झडी दिखाई जाती है, उस समय तो उसकी वही हालत हो जाती है जो बालछड या छारछबीला सूँघने वाली बिल्ली की होती है। कभी वह झडी को पकडने के लिए दौडता है, कभी पीछे खिसक जाता है, कभी उछलता है, कभी कूदता है और कभी दूर से गुर्रा कर रह जाता है।

जिस प्रकार भेडिया भेड को पुचकारता है, उसी प्रकार लीडर पब्लिक के पैसे पर प्यार करता है। हिसाब-फहमी का प्रश्न उसकी 'इन्सल्ट' और जीवन-मरण की समस्या है। बाहरी दुनिया मे लोगो को लीडर जैसा पुरजोश दिखाई देता है, वैसा वह अपनी गुफा मे नही नजर आता। क्योकि उसकी घरेलू और बहरेलू दो तरह की जिन्दगी होती है। जो लोग इस रहस्य को नही जानते वे अक्सर धोखा खा जाते और तकलीफ उठाते हैं।

लीडर जन्तु के मिलने-जुलने के भी कई तरीके है। किसी से वह खिल-खिलाकर 'शेकहैंड' करता है, किसी के साथ आधी

हंसी हंसता है, किसी के आगे उदासीनता दरसाता और किसी के समक्ष मुँह फुला कर और भौह चढाकर अपने मनोभाव प्रकट करता है। जिसके भाग्य मे जैसा बदा हो वैसा ही उसके साथ व्यवहार होता है। साधारण लोगों की शक्लों को जानते-बूझते भूल जाना और उनके किसी खत-पत्र का उत्तर न देना लीडरेन्द्र की खास खसूसियत समझनी चाहिये। लीडर की पोशाक बड़ी विचित्र होती है। परिस्थिति को देख उसे रग बदलना खूब आता है। कभी बह बढिया लिबास इख्तियार करता है तो कभी खद्दर की झूल लाद कर ही खुश हो जाता है। कभी-कभी पीले-काले या सफेद तार के फ्रेम मे शीशे के दो गोल-गोल टुकड़े हिलगा कर आँखो के ऊपर रख लेता है। झूल के थैलो मे एक ओर स्याही-भरी सटक लटकती रहती है, और दूसरी तरफ समय बताने वाली डिब्बी का दिल धडका करता है।

एक दो नही, लीडर सैकडो-सहस्रो तरह के होते हैं। कोई राजनैतिक मैदान मे उछल-कूद मचाता है, किसी ने अगाई-पिछाई तोड कर धार्मिक या साम्प्रदायिक क्षेत्र मे द्वन्द्व मचाना शुरू कर दिया है। कोई समाज-सशोधन की सड़क पर कुलाचें भरने मे मस्त है और कोई बिरादरी की बोसीदा बिल्डिंग पर बैठ कर 'ह्याऊँ-ह्याऊँ करता रहता है। इनके भी हजारो भेद-उपभेद है। सबका वर्णन करने के लिये बडी पोथी चाहिये। अगर मौका मिला और मजलिस जमी तो चैत्र कृष्णा प्रतिपदा की सभा मे इस विषय पर विस्तृत व्याख्यान दिया जायगा। सब लोग उस दिन हवाई किले के लम्बे-चौडे मैदान मे, रात्रि के ठीक पौने तीन बजे पधारे।

घसीटानन्द की घें-घें !

सुनोजी, सम्पादकजी ! बात सुनो, हम ऐसे-वैसे, ऐरे-ग़ैरे, अधकचरे, कुलेखक तो है ही नही, जो सोच-विचार कर या तबियत का "पैण्डुलम" थाम कर कुछ लिखने बैठे। हम तो ठहरे सुलेखक और सुकवि-नही—नही-कवीन्द्र और सुलेखकेश्वर ! जिस समय लिखने लगते है, उस समय कलम कुरङ्गी की-सी कुलाचे भरता हुआ कागज-कानन मे खूब ही किलोल करता है। काले मुँह की लेखनी से जो निकल गया, धनी के भाग ! हमारी तहरीर क्या है खुदा का फरमान होता है। मगर क्या बतावे, आजकल तो कुछ हमारा उत्साह फिक्र के शिकजे मे ऐसा कस गया है कि कुछ लिखने को जी ही नही चाहता। जब तबियत में जोश ही नही तो फिर क्या—

"गौहरे मज़मूं निकलते हैं, मगर बेआबदार—
जब कि दरियाये तबीअ़त जोश पर होता नहीं।"

नही तो जनाब ! इस बन्दे नातवाँ ने अपनी अस्सी-नव्वे बरस की जरा-सी उम्र मे जो मलिका हासिल किया है, वह किस कम्बख्त की किस्मत मे बदा था ? एक-एक दिन मे दो-दो तीन-तीन गद्य-पद्य मय विस्तृत पुस्तके तैयार कर देना तो ईजानिब के दस्ते मुबारक का मामूली करश्मा था। बन्दे की लेखनी की द्रुत गति देख कर देखने वाले 'पजाब मेल' की हँसी उडाकर फकफक करने वाली मोटरकार पर फक्किका फेका करते थे। हम नही समझते कि लोग अब छन्दःशास्त्र और अलङ्कार-ग्रन्थों को पढकर क्यो अपने समय को नष्ट-भ्रष्ट किया करते हैं ? हमे तो

अपनी जिन्दगी में, बखुदा, इन ऊल-जलूल बातो की जरूरत ही नही पडी ! हमने तो आज तक इन किताबो के दर्शन भी नही किये ! मगर—शायरी ! ओहो ! गजब की होती है ! शायरी की शोहरत तो यहाँ तक बढ गई है कि साधारण कोटि के आदमी तो क्या, बडे-बडे साहित्य-शत्रु तक उसकी मुक्तकठ से प्रशसा करते और दाद देते है। नीचे लिखी दो पक्तियों पर तो बस 'वाह-वाह' के पुल ही बँध गये ! दिल थाम और जरा होश सँभाल कर सुनिये—

> **हेच ऐंगज़ाइटीज़ न कर्त्तव्यम्**
> **कर्त्तव्यम् ज़िकरे ख़ुदा,**
> **ख़ुदा ताला प्रसादेन—**
> **सर्वं कार्यम् फ़तह् शबद ।**

मगर अब हमे बडा अफसोस होता है कि स्वतन्त्र विचार के हम जैसे 'निरकुश कवि' भी कविता-कामिनी के कोमल कलेवर को कठोरता की कसौटी पर कसना चाहते हैं। चाहिये तो यह कि शायरी की घोड़ी की लगाम उतार कर उसे बड़ी आजादी से बिना अगाई-पिछाई के हिनहिनाने और घूमने-फिरने दिया जाय। ख़ैर, हाँ एडीटर साहब, यह तो बतलाइये कि ये 'साहत्त समेलीन' क्या बला है ? हमे तो ऐसी नयी-नयी बातें पसन्द आती नही। भला देखिये तो, उस साल हमने अपने नवनवोन्मेषशाली मस्तिष्क का सेरों ख़ून ख़र्च कर पूरे सवा दो सेर का पुलन्दा "साहत्त के सभापित" को 'समेलीन' मे पढने के लिये भेजा था, मगर उसका वहाँ किसी ने नाम तक नही लिया। हमारी नावीना शायरी के पुरजोश मज़ामीन पर यह 'सेन्सर' का काम कैसा ? भला कोई बात है कि छन्दों के नियम, अलङ्कारों का उपयोग, रसों का संचार, भावों की भरमार आदि बाते न हों तो हमारी

"शुहर-ए-आफाक" शायरी को लोग शायरी ही न कहे ! बाप रे बाप ! यह नयी-नयी बाते कहाँ से आ गई ? कैसा जमाना हो गया ? अघटित घटना घटने लगी ! लोग हम जैसे शायरो की दिल-शिकनी करने मे जरा भी नही हिचकते। जो हो, नई रोशनी के दिलचले लोग चाहे जो करे पर, अपने राम तो 'राई घटे न तिल बढे' वही पुरानी लकीर पीटते हुए, 'घे-घे' करे ही जायँगे।

'प्रैक्टीकल परमार्थ'

अरे साहब, अर्थशास्त्र-अवधूत की अर्थी उठाकर, तिजारत-तवाइफ का तबला बजाना शुरू किया तो उसका भी फडाका उड गया! चाकरी-चन्द्रिका का चाहक चकोर बना तो वहाँ भी किस्मत की कृपा से "कोरमकोर चौबाल सौ!" मूजी मालिक ने साफ सुना दिया और खुले खजाने कह दिया—

चाकर है तो नाचा कर,
ना नाचे तो ना चाकर।

सो, दोस्त, चाकरी-चक्र मे चकफेरी भरते-भरते जोश का जनाजा निकल गया! तन्दुरुस्ती के ओधे नगाडे हो गये और साथ ही तोद की भी कुकुडुमकूँ बोल गई! इधर नौकरी की मार उधर फिकिर की फटकार! दोनो मिलकर एक और एक ग्यारह हो गये! दस खाऊ, एक कमाऊ! बाप रे बाप! जीवन हुआ या मरना! आबादी कहूँ या बरबादी! परिवार है या अत्याचार! आह! चिन्ता चुडैल ने तो चुप-चुप चुसकी ले-लेकर मेरे सुन्दर शरीर का सारा सार ही निचोड लिया! अब असार ससार मे मेरा जीवन भी निःसार बन गया! कहाँ जाऊँ! क्या करूँ? इधर जाऊँ या उधर मरूँ! नाक मे दम है और कान मे आँखे। बड़ी परेशानी! सख्त मुसीबत! भाग्य भडवे को बहुतेरा तलाश किया, जोरो से पुकारा, चीख-चीख कर आवाज दी, मगर वह हरामी किस की सुनता है। अन्त को अपने राम से न रहा गया और चाकरी-चुडैल को चूल्हे मे झोक कर बन गये पूरे 'निखिल तन्त्र स्वतन्त्र!' प्रारब्ध की पिस्तौल मे कुयश के कारतूस डाल

कर लगे दानियों के द्वार पर दनादन दागने ! पौराणिक लोग जिस गुणपुञ्ज गोमाता की पूँछ पकड़कर वैतरणी तरते हैं, उसके 'नाम मात्र' ने मुझे परिवार-पारावार से पार कर दिया ! फ़र्श से अर्श पर जा बैठाया ! जिस हिन्दू-हृदय के आगे गोरक्षा के नाम पर, गोलक खनखनाई उसी ने अण्टी टटोल या बटुआ खोल कर, गोल-गोल ताम्रटूक इस 'परमार्थ'-पेटी मे पटक दिये ! किसी ने इकन्नी की कन्नी दबाई और कोई दुअन्नी को 'दरियाए-ए-शोर' करने लगा। कितने ही भइये तो चॉदी के चिलकइये हमारे हवाले कर मूछे मरोडने लगे। जिस समय अपने राम रेल के डिब्बे मे कडकती हुई आवाज या फडकती हुई वाणी से गोरक्षा के गीत गाते थे, उस समय श्रोता सन्न और वक्ता प्रसन्न हो जाते थे। "अहा ! अच्छी अपील की ! खूब चिडियॉ फाँसी !! बडी सफलता हुई ! इन भोदू भक्तो से काफी टके हाथ लगेंगे और घर चल कर विविध व्यजन छकेंगे।" चमचमाती चपरास, लपलपाती रसीद बही, और खनखनाती हुई गोलक ने तो लोगों पर रौब डाट दिया। अगर कही हमने अपने गिरा-ग्रामोफोन पर गो-रोदन-रूप रैकर्ड चढा दिया तब तो बाजी ही मार ली ! सोने मे सुगन्ध आ गयी !! गिलोय नीम पर चढ गयी !!! हमारी गगनगामिनी गर्जना ने थर्ड तो थर्ड सैकिण्ड और फर्स्टक्लास तक के मुसाफिरो के कानो पर तडाक से तमाचा जड दिया ! वे भडभडाते हुए उठे, और पूछने लगे—क्या 'एकचुअली' 'कुलीजन', हो गया ! यह था बन्दे की वाणी का प्रभाव और आमदनी का भाव।'

अच्छा-फिर ? फिर क्या, लगी ईंट पर ईंट सवार होने और खटाखट खन्नी खटकने ! ग्राम भी खरीदे और धाम भी बनाये। विवाह भी किये और खुशियाँ भी मनाईं। हिसाब ? हिसाब ?

आखिर किसी के दादा का कुछ देना था जो हमसे कोई हिसाब-फहमी का मतालिबा करता ! अरे, पबलिक का पैसा पबलिक के पास ! किस का लेना और किस का देना ? कहाँ का जमाखर्च और कैसा वार्षिक विवरण ? हमने जो प्रचण्ड पुरुषार्थ किया था अब उसी का अनुसरण हमारा शिष्य-समुदाय भी कर रहा है। चेले माँग-माँग कर लाते है और अपने राम बैठे मौज उड़ाते है। 'आल इण्डिया गोशाला' के दालान मे दूध के दरिया बहते और घी के घान पडते है। बैलो की बहादुरी ने अलग खेतो को खुश किस्मती अता कर रक्खी है। "अखिल भारतीय सस्कृत विद्यालय" भी अपना अच्छा काम कर रहा है। विद्यार्थी-वृन्द और अध्यापक महाशय को मेरी चाकरी और चापलूसी से फुरसत मिल जाती है तो वे भी सप्ताह मे एक घण्टे किसी दरख्त के नीचे बैठ कर "टाभ्याम्भिस्" कर लेते है। लोग मुझे ब्रह्मचर्य का 'बायलर' या सदाचार का 'सन्दूक' समझते है। परन्तु जिस समय मैं पोते को बगल मे दबा कर, मचान पर बैठा-बैठा हुक्का गुडगुडाता और दाढी पर हाथ फटकारता हूँ, उस समय बार-बार भूलने पर भी यह लोकोक्ति याद आये बिना नही रहती—

"दुनिया ठगिये मक्कर से,
रोटी खइये शक्कर से।"

वस्था थी। मनोहर गीत गाये जा रहे थे, 'माधुरी' भी 'रामेश्वर' की कृपा से रँग बदल-बदल कर अपने सौन्दर्य की छटा दिखा रही थी।

२

हाँ, 'ज्ञान-मंडल' की बात तो रह ही गई, वहाँ 'वेंकटेश्वर' और 'बगवासी' ने एक नयी लीला रच डाली। ये दोनो कहने लगे कि ज्योतिष के विचार से बनारस मे विवाह करना ठीक न होगा। जब-जब यहाँ सहयोगियो के सम्बन्ध हुए तब ही तब दुःखद परिणाम निकले है। 'भारत-जीवन' की दुर्दशा देखिये, 'तरगिणी' के बिना कैसा तड़पता रहता है। 'स्वार्थ' और 'मर्यादा' का तो ऐसा अशुभ विवाह हुआ कि आज दम्पती मे से एक भी जीवित न रहा! 'निगमागम-चन्द्रिका' इसी डर से अभी तक अविवाहिता बनी हुई है, नही तो क्या वह 'ब्राह्मण-सर्वस्व' का पाणि-ग्रहण न कर सकती थी? 'कर्त्तव्य' ने इस बात का समर्थन किया और कहा—"वस्तुतः कुछ ऐसी ही बात है, कानपुर में 'प्रताप' तथा 'प्रभा' के विवाह और प्रयाग मे 'अभ्युदय' तथा 'सरस्वती' के सम्बन्ध से क्रमशः 'विक्रम' और 'बालसखा' उत्पन्न हुए पर बनारसी विवाहो का उल्टा ही परिणाम निकला है!" बहुत-से सहयोगियो ने इस भ्रम का समर्थन किया पर 'आर्यमित्र', 'अर्जुन', 'आर्यमार्त्तण्ड' आदि को यह बात बहुत नापसन्द आई। उन्होने [illegible] दलीलो से इस 'ढिलमिल यकीनी' का खडन किया। [illegible] माकूल थी, सबको माननी पड़ी और बनारस मे ही विवाह [illegible] बात पक्की रही।

मौके पर 'आर्यमित्र' ने एक बड़े मार्के की बात कही, —"माधुरी-वधू से मतवाला-वर तोल-मोल तथा आयु

में बहुत कम है, अतएव इस बेजोड़ विवाह से आर्यसमाजी विचार-धारा के लोग सहमत नही हो सकते।" सुधारक-दल 'निस्सदेह', 'निस्सदेह' कह कर 'आर्यमित्र' की हाँ मे हाँ मिलाने लगा। एक बाराती तो बिगड़ कर यहाँ तक कहने लगा—"माधुरी और मतवाला के गुण, कर्म, स्वभाव नही मिलते! ठिकाना है—कहाँ एक सर्वाङ्ग सम्पन्ना सुन्दरी और कहाँ उछलता-कूदता मुँहफट मतवाला! कहाँ वह भारी-भरकम रमणी और कहाँ यह निमुच्छा बावला! कहाँ उसकी सुहावनी वेश-भूषा और कहाँ इसकी दिगम्बर देह पर लिपटी हुई लँगोटी! कहाँ उसका सँभला-सुधरा केश-कलाप और कहाँ इसकी बड़े-बड़े बालो वाली खोपड़ी! कहाँ 'माधुरी' के कलकण्ठ की मनोहर माला और कहाँ 'मतवाला' की गर्दन से लिपटा नाग काला! कहाँ उसके कर-कमल का कलित कङ्कण और कहाँ इसकी टेढी टाँगों का खुरदरा खडुआ! कहाँ माधुर्य-पान करने वाली माधुरी और कहाँ बोतल उडेलने वाला बौड़म! कहाँ खुले हुए सुन्दर-सुघड नेत्र और कहाँ मिची हुई औंधी-अनघड आँखे! कहाँ उस सुसभ्या का घूँघट उठाकर झाँकना और कहाँ इस असभ्य का टाँग उठा कर उछलना! कहाँ उसकी मन्द मुस्कराहट और कहाँ इसकी बेढब बडबडाहट! कहाँ दो वर्ष की दुलहिन और कहाँ सतमासा शौहर! कहाँ 'माधुरी' की मोहिनी मूरत और कहाँ 'मतवाला' की भौडी सूरत! 'अन्तरम् महदन्तरम्!—'कहो तो कहाँ चरण कहाँ माथा।'

इसके बाद कई अन्य सुधारकों ने भी लम्बे-चौडे व्याख्यान झाडे परन्तु जब सब बाते तय हो चुकी थी तब कोई कर ही क्या सकता था?

'मैं तू राजी, तो क्या करेगा 'काजी'"

जब 'मतवाला' 'माधुरी' पर और 'माधुरी' 'मतवाला' पर मुग्ध है तो सुधारको के ढोल की ढमाढम सुनता कौन है। सुधार विषयक सब प्रस्ताव व्यर्थ गये ? अभी विवाह-सस्कार मे देर थी, अतः बाराती लोग मण्डली बनाकर आपस में विनोद करने लगे।

'कर्मवीर'—"भाई, 'भारतमित्र' और बगवासी' बडे सयमी है, वृद्ध हो गये पर इन्होने आज तक वर्णबाह्य विवाह नही किये। यदि वे चाहते तो बगाल की 'वसुमती', विनोदिनी', 'स्वर्णकुमारी' या ऐसी ही किसी वधू से शादी कर सकते थे, पर, उन्होने ऐसा नही किया।"

'प्रणवीर'—"क्या 'वेकटेश्वर-समाचार' किसी गुजरातिन से गँठजोडा कर वर्णबाह्य विवाह की "वाहवाही" नही लूट सकता था ?"

'अभ्युदय'—"'माधुरी' का विवाह 'आर्यमित्र' से होता तो अच्छा रहता क्योकि इसको अपना २५ वर्ष का ब्रह्मचर्य-काल समाप्त किये एक साल हो गया।"

'प्रेम'—परन्तु 'आर्यमित्र' को यह बात पसन्द कब आती ? वह तो ठहरा बात-बात मे गुण, कर्म, स्वभाव तलाश करने वाला अक्खड आर्य !"

'अर्जुन'—"नही-नही, इन दोनो मे परस्पर बडा विचार-वैभिन्य है, वह बेजोड विवाह हरगिज न करेगा। २५, २६ वर्ष के वर को नियमानुसार षोडशी वधू चाहिये।"

'विश्वमित्र'—"माधुरी के साथ 'प्रताप' या 'अभ्युदय' का सम्बन्ध ...."

'कलकत्ता-समाचार'—"अरे यार, क्या अक्ल चरने चली गयी

है, 'प्रभा' और 'सरस्वती' किसकी जान को रोएंगी।"

'वर्त्तमान'—"हमारे समाज मे सहयोगियो की अपेक्षा सहयोगिनियाँ कम है, इसी से ये क़याफ़े लडाने पड़ते है, वरना—"

'मतवाला'—"तुम लोग भी गजब कर रहे हो, जिस भलेमानस के विवाह मे आये हो, पहले उसे तो "चौपाया' बनने दो, बाकी सब बौत फिर बौत लेना।"

३

इतनी बाते करते-करते विवाह-वेला आ पहुँची, सब लोग मण्डप में गये। विवाह का कार्य प्रारम्भ हुआ, ब्राह्मण-सर्वस्व' मन्त्र पढने लगा और 'ब्रह्मचारी' ने क्रिया करानी शुरू की। 'मतवाला' नाचता जाता था और 'माधुरी' सकोच से धरती मे धँसी जाती थी। बाराती लोग कहकहा लगा कर हँस रहे थे। 'मतवाला' का छोटा भाई 'रसगुल्ला' वर-वधू की ओर इशारा करके कहता था—

"इन सम पुरुष न उन सम नारी,
जनु विरंचि सब बात सँवारी।"

अहा! फेरे फिरने मे बडा आनन्द आया, 'मतवाला' की सात डगे माधुरी की एक पदी के बराबर होती थी। 'माधुरी' चलते मे झुकती जाती थी और 'मतवाला उचक-उचक कर ऊँचा उठने की कोशिश करता था। खैर, ज्यो-त्यो वैवाहिक कृत्य समाप्त हुआ, 'आकाशवाणी' ने फूल बरसाये, 'ज्योति' ने आर्ती गाई, 'प्रभा' निछावर करने लगी और 'सरस्वती' ने स्वागत किया! दूसरी ओर से वृद्धों ने दम्पती को आर्शीवाद देना शुरू किया।

'भारतमित्र'—

"अचल होहि अहिवात तुम्हारा,
जब तक घिसे न टाइप सारा।"

'बंगवासी'—

"जीवित रहैं वधू-वर प्यारे,
कागज़ फटें न जब तक सारे।"

'वेंकटेश्वर'—

"जीवित रहै ईश यह जोड़ा,
जब तक वर के कर मे कोड़ा।"

'प्रेम'—

"रहै प्रीति निशिवासर पक्की,
जब तक चले भूत की चक्की।"

'अभ्युदय'—

"सारस जोडी तबलो जीवे,
जब लों 'मतवाला' मद पीवे।"

आशीर्वाद के बाद बारात तो विदा हो गई, पर वर-वधू के बीच विवाद उठ खडा हुआ है। माधुरी कहती है—"तुम्हें लखनऊ के अमीनाबाद पार्क मे रहना पडेगा।" मतवाला कहता है—"तुम्हे कलकत्ता के शंकर घोष लेन मे घर बसाना होगा।" दोनो अपने-अपने हठ पर डटे हुए है। विशेपज्ञो का कहना है कि अगर इस विषय मे समझौता न हुआ तो बनारस मे बना रस विष बन जायगा, और फेरो को फेर कर भाँवरो के बखिये उधेडने पडेगे।

हुक्के की हिस्ट्री

उफ ! सुधारको ने मेरा नाक मे दम कर दिया ! जिस सभा मे जाइये मेरा विरोध ! जिस सोसाइटी को देखिये मेरी दुश्मनी ! जिस सस्था की निरीक्षण कीजिये मेरी बगावत ! अरे साहब ! मै क्या हुआ लोगो की आँखो का काँटा हो गया ! कोरा वाचनिक विरोध होता सो भी नही, लोगों ने मुझे काया-कष्ट देकर अग-भंग तक कर डाला ! किसी ने मुकुट फोड़ा, किसी ने गरदन पर ईटे बजाई, कोई दिल पर दुहत्थड़ मार कर वीरता दिखाने लगा और किसी ने फैफड़े पर पत्थर पटक दिया ! निदान—जिससे जिस तरह बना मेरा वश-विनाश करने लगा। परन्तु मुझे देखिये, मै नाना प्रकार के सङ्कट झेलता, मुसीबत ठेलता लोगो के मुँह लगा ही रहा ! भाई क्या कहते हो, मै तो मै कभी घूरे की भी फिरती है। देखते नही, जो लोग एक दिन मुझे मारने को दौडते थे आज वे ही शुद्धि के मैदान मे बैठकर मेरी परिस्तिश कर रहे है।

मेरी कारगुजारी ही ऐसी है। औरङ्गजेब की तेज तलवार को जिस काम के करने मे देर लगती थी उसे मै एक 'गुडगुडा-हट' मे करा देता हूँ। शुद्धि-सभा को जितना मुझ पर भरोसा है उतना बेचारे वेद-शास्त्रो पर भी नही। मैंने अब तक लाखो बिछुड़ों को उनके भाइयो से मिला दिया। पहले मेरी शक्ल से नफरत की जाती थी, पर, अब दस-दस हजार की सभा के बीच, बड़े-बड़े राजे-महाराजे, साधु-सन्यासियों और पण्डित-पुरो-हितों की मौजूदगी मे मेरी तूती बोलती है ! मेरी मधुर ध्वनि सुनते ही जनता 'जय-जयकार' करने लगती है। लोग मेरी मृदुल मूर्ति की ओर टकटकी लगाये देखते रहते है। अगर मैं

नही तो कुछ भी नही और मैं हूँ तो सब कुछ ! कोई नही पूछता कि वेद क़्या कहते है ? शास्त्र क़्या अलापते है ? स्मृति की क़्या सम्मति है ? पण्डित क़्या बखानते है ? सब की एक ही बात— "हुक़्क़ा-पानी हुआ कि नही ?" "हॉ, हो गया !"—"अच्छा तो अब रोटी-बेटी होने दो, सगाई चढने दो बारात बढने दो और पण्डित को विवाह पढने दो।"

देखी मेरी शक्ति और परखा मेरा पराक्रम ! है मुझ में कुछ करामात ? आधुनिक भारत ने बस दो नवीन आविष्कार किये है, एक मेरा और दूसरा मेरे सौतेला भाई चरखे का ! समाज और देश का अगर सुधार होगा तो हम दोनो के ही द्वारा। देखने मे साधारण पर, काम करने में हम लोग असाधारण है। अगर सन्देह हो तो भारतीय शुद्धि-सभा के महा मन्त्रीजी या कांग्रेस कमेटी के प्रेसीडेण्ट साहब से हम दोनो की कारगुजारी की रिपोर्ट तलब कर ली जावे।

---

१४४ !

अरे क्या पूछते हो—मेरा नाम '१४४' है। मैंने बड़ों-बडो का मान-मर्दन कर दिया! पुष्प-शय्या पर शयन करने वालो को कारागार की कँकरीली धरती पर सुला दिया! सिंह की तरह गर्जने वाले वक्ताओं के मुँह पर ऐसा मुछीका लगाया कि उनकी बोलती बन्द करदी! जो काम बड़ी-बड़ी शक्तियों से महीनो में नही हुआ उसे मैंने मिनटो में कर दिखाया! जिस सभा-मण्डप मे, मैं पहुँच गई उसमे बस मैं ही मैं मटकने लगी। बडे-बड़े मुझ से मग़ज मार कर मर गये, पर, किसी से मेरा बाल भी बाँका न हुआ। मैं मोम की तरह इतनी मुलायम हूँ कि मजिस्ट्रेट-मदारी चाहे जिस ओर मुझे घुमा-फिरा सकता है। साथ ही वज्र की तरह इतनी कठोर हूँ कि जहाँ पजे अडा देती हूँ फिर सम्पटपाट किए बिना टलती नही।

कहो, खबर है असहयोग आन्दोलन की! पता है 'नान-कोआपरेशन मूवमेट' का! कैसे करिश्मे दिखाये! क्या गुल खिलाये। कितना कौतुक किया! रोज यही सुन पडती थी—"आज फलाँ 'लाल' लद गये, कल अमुक 'दास' गये, परसो इनके 'देव' बेड़ियाँ खटका रहे है, अतरसो ढिमके दत्त हथकड़ी पहने जा रहे है।" भाई, सच समझना, मेरी बदौलत लोगो मे हिम्मत आ गई। जो लोग कैद के नाम से कानो पर हाथ रखते थे, वे भी मेरी ललकार पर एक बार 'जेल की चिड़िया' बनने को तैयार हो गये, और तो और अबला कहलाने वाली स्त्रियाँ भी सबला बन बैठी! ह ह ह ह ह! इन बातो से मैं खूब मशहूर हो गई हूँ! मेरा नाम शैतान की तरह 'शोहर-ए-आफाक' हो गया है! मेरी सर्वतोमुखी गति है।

मैं पहले ही मोम की तरह मुलायम और वज्र की तरह कठोर बन चुकी हूँ। राजनैतिक दगल से जी ऊब उठा तो अब मेरे मदारी ने मुझे धार्मिक क्षेत्र की नाप करने को भेजा है। 'नगरकीर्तन' और 'रामलीला' पर मैंने अपना सिक्का जमाया है ? इन घूम-धडाको पर अपनी धाक बिठाई है ! है किसी की हिम्मत जो मुझ से मुँह मोड कर मैदान में डटे ? मिला कोई जिसने मेरा मान-मर्दन किया ! 'ह ह ह ह' मैं क्या हूँ, शक्ति का कोष और बल का भण्डार हूँ !

अहा ! मेरे नाम मे तो बडी ही विचित्रता है। मैं तीन अकों से बनी हूँ, जिनका योग नौ होता है। ससार का सारा गणित शास्त्र इन ९ अंकों मे ही समाप्त हो जाता है। अर्थात् मैं इस 'अकशास्त्र' की पड़दादी हूँ ! या यो कहिये कि जनता से पूजा पाने के लिए 'नवग्रह' स्वरूप हूँ ! मैं एक हूँ और चार-चार भी; अर्थात् ससार को उपदेश देती हूँ कि एक ईश्वर पर विश्वास रखते हुए 'काम', 'क्रोध', 'मद' 'लोभ' से बचो और 'धर्म', 'अर्थ', 'काम', 'मोक्ष' की प्राप्ति में प्रयत्नवान हो ! 'पोलिटिकल पार्टी' व्यर्थ ही मुझ से भयभीत होती है—मेरा १ उसे एकता का बोध कराता है, ४ 'साम', 'दाम', 'दण्ड', 'भेद' बताता है, और दूसरा ४ चरखा, करघा, खद्दर एवम् अछूतोद्धार की ओर ले जाता है। समझे ! मैं इतनी विशाल और ऐसी व्यापक हूँ ! मैं लोगो से मैत्री करने आती हूँ, लोग मुझे देखकर बिदकते है—कोसते हैं ! इसमे मेरा क्या दोष ? मैं क्या जानूँ ? मेरा मजिस्ट्रेट मदारी जाने जो मेरी डोरी इधर से उधर और उधर से इधर करता रहता है—

'वाकी माया मोहि नचावे,
मैं कठपुतली वह डोरी है—
दईमारे भारत होरी है।'

कवि-सम्मेलन की 'धड़ाकधूँ'

रात के ठीक १२ बजे, विनोद-वाटिका के बाडे मे कवि-सम्मेलन का कार्य प्रारम्भ हुआ। भारतवर्ष के प्रायः सभी सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि मौजूद थे। जो लोग किसी विशेष कारण से न आ सके थे उन्होने अपनी कविताएँ भेजकर ही सम्मेलन से सहानुभूति प्रकट की थी। सम्मेलन के सभापति-निर्वाचन का प्रस्ताव होने पर मि० विनोदानन्दजी सबसे पहले बोल उठे—"मेरी राय मे, मैं ही इस पद के लिए अधिक उपयुक्त हूँ, क्योकि न तो मैंने पिगल पढा है, और न किसी छन्दःशास्त्र का अनुशीलन किया है। न अलकार जानता हूँ और न रसो का ही आस्वादन कर पाया है। पर, मेरी शायरी, ओह! गजब की होती है, सुनते ही लोगों के दिमाग चक्कर काटने लगते है। तबीअत उबल उठती है, दिल दहक जाता है। मैं समझता हूँ, मेरी ऐसी जौलानी देख कर ही किसी ने यह बात कही है—"Poets are born not made" अर्थात् शायर लोग पैदा होते है, बनाये नही जाते। उठती हुई तबीअत पर किताबो का गट्ठर लादना भारी भूल है। मैंने अपने ऊपर यह जुल्म नही किया। उम्मेद है कि आप लोगों ने मेरा मफहूम समझ लिया होगा और आप मेरे लिए ही राय देगे।" कवि-समाज विनोदानन्दजी की बाते सुनकर दग रह गया और सर्व सम्मति से आप ही सम्मेलन के सभापति बनाए गये।

आपने सभापति का आसन ग्रहण करते हुए काव्य-सम्बन्धी जो बाते कही वे इतनी स्थूल थी कि पाठको की सूक्ष्म समझ में नही घुस सकती, इसलिए उनका यहाँ उल्लेख न किया जायगा। खैर, सभापतिजी की आज्ञा से कवि-कुल-कक्कड़ श्रीयुत चटपटा-

नन्दजी ने अपनी हृदय-फाडक और लताड़-भाड़क आवाज में कविता-कपोतनी के पख उखाड़ने शुरू किये—

"पापी पेट भरन के कारन दर-दर दुरे फिरा करते हो,
कुत्तो की-सी पूँछ हिलाकर नाक जमीन घिसा करते हो,
पा करके फिर वेतन थोड़ा हाथ से हाथ मला करते हो,
कालिज डिगरी पाय हाय! जब सरविस खोज किया करते हो,

× × ×

सादा कपड़े पहिन-ओढ़ कर ऑफिस जाने में डरते हो,
गाढ़े की टोपी से नफरत सिर पर हैट धरे फिरते हो।

× × ×

सनद सार्टीफिकट हाथ में, सेवा करने को फिरते हो,
खाकसार खादिम बन करके अर्जी पेश किया करते हो।
सौ-सौ बार सलाम झुकाकर मुँह की ओर तका करते हो
कालिज डिगरी पाय हाय! जब सर ·............... ..."

अभी चटपटानन्दजी अपनी कविता को समाप्त भी न कर पाये थे कि झट श्री झझटानन्दजी दहाड़ने लगे—"बैठो-बैठो, तुमने कविता के कण्ठ पर कुठार चला दिया! न अनुप्रास का पता और न छन्द की गति का ध्यान! 'सरविस' की सनक मे सबको 'साधुवाद' कह दिया! बैठो-बैठो तुम्हारी शायरी से शुअरा का कलेजा काँपने लगा है।"

सभा मे गोलमाल होता देख कर मिस्टर प्रेसीडेन्ट "आर्डर 'प्लीज"—"आर्डर प्लीज" का प्रलाप करते हुए बोले—'हजरात'! अब आप लोग 'शुतर बेमुहाल' की तरह इधर-उधर न दौड़े। मै एक 'शमस्या' देता हूँ, सब साहबान इतमीनान के साथ उसकी पूर्ति करे और एक के बाद दूसरे साहब सुनाते चले।

समस्या—

"नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।"

कम्बख़्त कवि—

हो जावें हम भारतवासी सब के सब बरबाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कठोर कवि—

विधवा-गाय-अनाथों की हाँ, नेक न आए याद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कुतर्की कवि—

सत्य-अहिंसा की सब बातें समझें हम बकवाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

काला कवि—

ब्लैक वारनिश-सी बौडी पर कोट-हैट लें लाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कट्टर कवि—

भारत पड़े भाड़ में चाहे, घटे न पद-मर्याद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कोपरेटर कवि—

पड़े पतन की पोखरियो में करें न दाद-फ़िराद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कर्मवीर कवि—

मनमानी माया रच डालो, है अबलो आज़ाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

क्रिश्चियन कवि—

ब्लैकवृन्द को मिलै हमारे ईसा का सुप्रसाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

फक्कड़ कवि—

हलुआ खाकर खीर सपोटें तऊ न आवे स्वाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कृपण कवि—

खाते-पीते रहे मौज से लेकर स्वाद-सवाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कौरस्पोडेण्ट कवि—

भेजूं छाँट-छाँट छपने को नित्य अशुभ संवाद,
नाथ ! एसा दो आशीर्वाद ।

कुटॉट कवि—

जरा-जरा-से वाकआत पर बरपा करें फिसाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कारपोरेशन कवि—

काम न करना पड़े, शहर में बढ़े सड़ॉयद-खाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कौमर्स कवि—

खद्दर और स्वदेशीपन का चढ़े न अब उन्माद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कण्टक कवि—

गिरे-पडे, पिछड़े लोगों का सुने न आरत नाद;
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

कुशासन कवि—

भारत के हित से क्या मतलब करते रहे प्रमाद,
नाथ ! ऐसा दो आशीर्वाद ।

हवाई कवि-सम्मेलन

[अब की बार लोगों के दिमाग मे फिर कवि-सम्मेलन का खब्त सवार हुआ। वहुत आन्दोलन हुआ, अन्त में सर्व सम्मति से निश्चित किया गया कि इस वर्ष सम्मेलन, ज़मीन और आसमान के बीचोबीच करना चाहिए। बस, इस काम के लिये एक जय्यद जहाज (हवाई) मँगाया गया, जिसमें बैठ कर कवि-समाज आकाश की ओर उड़ा। वहाँ से बिना तार के तार द्वारा जो समाचार उपलब्ध हुए हैं, वे नीचे दिये जाते हैं—सम्पादक।]

अहा! वायुयान में बड़ा आनन्द आ रहा है। यहाँ आकर कवि लोगो के मस्तिष्क मे एक अद्भुत स्फूर्ति पैदा हो गई है। लोगों के दहकते दिमाग से शायरी के शौले बढी तेज़ी से फूट रहे है। नाम कहाँ तक गिनाऊँ, सभी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवि मौजूद है। आज रात को पौने दो बजे से कवि-सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। समस्या थी—"आता है याद हमको गुज़रा हुआ जमाना"। हिन्दी समस्या के स्थान पर उर्दू 'तरह' को सुन कर कवि-समाज बेतरह नाराज हुआ! घनघोर वाग्युद्ध होने लगा, खूब लनतरानियाँ हँकी! घूँसे-मुक्कों तक की नौबत आ गई! लोग वायुयान से असहयोग तक करने को तैयार हो गये! पर, सम्मेलन के प्रधान श्रीयुत काव्य-कण्टकजी ने अपनी अपूर्व योग्यता द्वारा सब का समाधान कर दिया और उक्त उर्दू समस्या पर ही पूर्तियाँ पढने की आज्ञा दी। प्रधान की 'रूलिंग' सबको माननी पड़ी और कवियों ने एक-एक करके पूर्तियाँ सुनानी शुरू कीं, कुछ पूर्तियाँ इस प्रकार थी—

समस्या—

"आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।"

पूर्तियाँ—

संवाददाता कवि—

शहरो में घूम-फिर कर खबरो को खोज लाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

पाचक कवि—

पकवान खीर पूरी सखरी खरी पकाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

भक्त कवि—

चौकी पै पाठ करना और बार-बार न्हाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

पतित कवि—

वचनों को भंग करना लुटिया सदा डुबाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

लेखक कवि—

ले लेख दूसरो के निज नाम से छपाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

भुक्खड़ कवि—

बेकूत पेट भरना दस बार दस्त जाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

'डायर' कवि—

निर्दोष भाइयों पर गन-गोलियां चलाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

निकम्मा कवि—

करना न काम कुछ भी पर चैन की उड़ाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

स्वार्थी कवि—

लोगों से ठग के खाना गुर्राना - गुरगुराना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

कौंसिल कवि—

बनकर प्रजा का प्रतिनिधि कुछ भी न कर दिखाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

म्युनिसिपल कवि—

करके असावधानी सब शहर को सड़ाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

करुण कवि—

निज देश-दुर्दशा पर आँसू सदा बहाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

गायक कवि—

स्वरहीन गीत गाना; बेताल 'गत' बजाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

जमीदार कवि—

आसामियो को दुख दे 'कर-भेज' का बढ़ाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

वकील कवि—

अभियोग लड़-लड़ा कर शुकराना खूब पाना,
आता है याद हमको गुज़रा हुआ ज़माना।

वैद्य कवि—

अल्पज्ञता के कारण रोगी का दम घुटाना,
आता है याद हमको गुजरा हुआ जमाना।

कवियो की समस्या-पूर्तियो पर एकदम 'वाह-वाह' और 'मरहबा-मरहबा' की आवाजे आने लगी। कितने ही मन-चले तो मारे प्रसन्नता के पेट पीटने लगे। बड़ा कोलाहल हुआ। जहाज का कप्तान समझा कि कोई आफत आई! दंगा हो गया! चट उसने 'वायुयान' की गति जमीन की ओर की। थोड़ी देर मे ही वह नीचे आ गया। प्रेसीडेण्ट ने कहा—"लो, अब आप लोग उतरे और अपनी-अपनी इच्छाएँ पूर्ण करे। आप लोगो ने कविता तो कुछ की नही, अपनी-अपनी ख्वाहिशो का इजहार जरूर किया। अच्छा, अब आप आजाद हैं, जिसका जी जिधर चाहे उधर वह जा सकता है। सम्मेलन खत्म किया जाता है।"

'चपरपंच' का चीत्कार

(१)

सुनो, भाइयो ! बात मेरी सुनो
कलेजा पकड़ कर सिरों को धुनो
ग़जब हो रहा है निहारो ज़रा
धरम को न इस भाँति मारो ज़रा

(२)

न मर्याद का ध्यान तुमको रहा
न मानो चपरपंच का कुछ कहा
बड़े उग्र, उद्दण्ड तुम हो रहे
बड़प्पन बड़ो का वृथा खो रहे

(३)

अगर जाति का चाहते हो भला
दबोचो सदा संघटन का गला
न जीती रहे, एकता की सभा
बुझा दो, अरे ! प्रेम की सुप्रभा

(४)

अछूतादि का नाम भी तो न लो
गिरो मे लपक लात दो और दो
अगर वे विधर्मी बनें तो बनें
हमारी सदा चैन ही में छनें

(५)

कभी भूल कर भी न आगे बढ़ो
गढ़े से निकल कर न गिरि पर चढ़ो
कड़ी 'कूप-मण्डूकता' धारिये
छुआछूत का जाल बिस्तारिये

(६)

कलाक़न्द पूड़ी उड़ाया करो
मगर, दाल-रोटी न खाया करो
यही शुद्धता का महा मर्म है
सुनो, पण्डितो, बस परम धर्म है

(७)

नहीं हानि यदि गात-गर्दन हिले
करो व्याह यदि बाल-बाला मिले
न छोड़ो, अरे ! थैलियाँ खोल दो
बधू को वरो स्वर्ण से तोल दो

(८)

दुखी बाल-विधवा बिगोती रहें
बिलखती रहे, प्राण खोती रहे
मगर व्याह उनका रचाना नहीं
सुकुल को कलङ्की बनाना नहीं

(९)

पुजापा चढाओ मियाँ-मीर को
दुशाला उढ़ाओ पड़े पीर को

क़बर की करामात को मान दो
कुतर्की वकें तो न कुछ ध्यान दो

(१०)

घरों में लड़ो और बाहर पिटो
'क्षमा' को न छोड़ो मरो या मिटो
न बलवान बनना, अकड़ना कभी
न तलवार, बरछी पकड़ना कभी

(११)

लुटें देवियाँ पास जाना नही
झुकें भाड़ मे, पर बचना नहीं
दिखाना न बल की कहीं बानगी
सुरक्षित रहे मर्द ! 'मर्दानगी'

(१२)

रकम दूसरों की गटकते रहो
सटासट्ट माला सटकते रहो
बनो धर्म के धाम संसार में
अड़ाओ सदा टाँग उपकार में

(१३)

पकड़ गाय दो-चार चन्दा करो
न पानी पिलाओ न चारा धरो
स्वयम् मौज मारो मजे में रहो
भजो भोर गोपाल ! 'शिव ! शिव !! कहो

(१४)

न भूलो कभी 'ब्रादरी' को भला
इसी में छिपी विश्व की हैं कला
किसी पंच का कोप होने न दो
कभी प्रेम का बीज बोने न दो

(१५)

भरो पाप की पोट डरना नहीं
कभी पुण्य का काम करना नहीं
झुकाओ, हमे थैलियाँ प्रेम से
रहोगे हमेशा कुशल-क्षेम से

पद्वी-पतुरिया

(१)

"गोरे गुरुगण की ख़ातिर में,
ख़रच करूँगा दाम,
दमकेगा दुमदार सितारा,
बनकर जुगनू नाम।
ख़िताबों को फटकारूँगा,
किसी से कभी न हारूँगा।"

(२)

"जग में जीवन-भर भोगूंगा,
मनमाने सुखभोग।
परम रङ्क महँगी के मारे,
प्राण तजें लघु लोग।
उन्हे तो भी न निहारूँगा,
किसी से कभी न हारूँगा।"

भाई, भिड़ुनमिश्र !

लो, काम बन गया ! बरसों की मिन्नत-ख़ुशामद और मेल-मुरब्बत का नतीजा निकल आया—'अमित काल मैं कीन्ह मजूरी, आज दीन्ह विधि सब भरपूरी।' जिसके लिए हम आठ पहर चौंसठ घड़ी राम-रटना लगाये रहते थे, अन्त मे वह 'पदवी-पतुरिया' प्राप्त हो ही गई ! बलिहारी है, हमारी हिम्मत को, और बधाई है हमारी हमको ! मगर भाई, दुनिया बड़ी

बेढंगी है, उससे कृतज्ञता कर्पूर हुई चली जा रही है। कितने ही लफगे लनतरानियाँ हाँकते हुए हम से कहते है कि—'पदवी-प्रेयसी को वापस करदो।' शिव ! शिव !! जिस खिताब-खातून की खातिर, हुजूर की खिदमत मे हाजिर होते-होते हड्डियों में हड़कन होने लगी, उसे वापस करदे—घर आई लक्ष्मी को फेर दे ! ह ह ह ह !!! लोगो को जरा शऊर नही है।

जिन साहबो की ठोकरो से ठुकराये जाने के लिए लोग लालायित रहते है, जिन श्रीमानो के श्रीमुख से ऊल-जलूल सुनना सौभाग्य समझा जाता है, जिन तिल्लीतोडो की तिरछी त्यौरी कृपा-कटाक्ष के नाम से पुकारी जाती है, उनकी प्रदत्त प्रशस्त पदवियाँ त्याग दी जायँ ! क्या खूब ! लोग नही जानते कि ये देव-दुर्लभ उपाधियाँ कितनी तीव्र तपश्चर्या और कैसे प्रचुर परिश्रम से प्राप्त होती है। अरे भाई ! जब अँगरेजो की अर्चना और भाइयो की भर्त्सना करते-करते जीभ पर छाले और हलक मे फाले पड जाते है तब कही यह खुश किस्मती हासिल होती है। डालियाँ लगाते और गालियाँ खाते जब पूरी 'सहिष्णुता' आ जाती है तब यह सुदिन दिखाई देता है। क्या तुम्हे नही मालूम कि 'पदवी-पतुरिया' की प्राप्ति के लिये राजनैतिक सभा-सोसाइटियो मे जाना तो दर-किनार, मैं उनके समाचार पढ कर कुल्ला और सुनकर कान साफ किया करता हूँ। 'वदेमातरम्' पत्र छूकर, भयङ्कर शीतकाल मे भी कई बार हाथ धोने पड़ते है। राजनीति के कीटाणु नष्ट करने के लिए, छह-छह बार 'फनायल' छिडकवाई जाती है। असहयोगियो की परछाई पडने से तीन-तीन बार स्नान करना पडता है। सार्वजनिक सस्थाओ को चन्दा देना भयङ्कर पाप समझता हूँ। असहयोग आन्दोलन मे भाग लेकर, देश से अनुराग रखना बिलकुल विसार दिया है। साहबो को रिझाने

और हुजूरों को मनाने में ही मेरे धन का सदैव सदुपयोग हुआ करता है। मतलब यह है कि जब मैंने साहबों को सर्वस्व और अपना ध्येय वना लिया तब कही पूरी प्रार्थना और ऊँची उपासना के पश्चात् 'पदवी-पतुरिया' के सुन्दर स्वरूप की झाँकी हुई है।

जो हो, अब हम 'पदवी पतुरिया' के प्राण प्यारे और प्राणनाथ है। सब जगह हमारा सम्मान होगा। दरबार मे सबसे आगे नही तो पीछे जरूर कुर्सी मिलेगी। हाँ मे हाँ मिलायेंगे और आनन्द पायेंगे। साहबो की सेवा करेंगे और मेवा खायेंगे। देश को दुरदुरायेंगे और सारे झगडों से छूट जायेंगे। हम होंगे और हमारा नाम, तुम जानो और तुम्हारा काम! एक बात और की जायगी अर्थात् जहाँ तक मुमकिन होगा, इन हिन्दुस्तानियो से बाते कम करेंगे। ये अजीब जन्तु न मौका देखते है न महल। मन में आता है तभी देश-सुधार के भौंडे राग अलापने लगते है। एक गवैया रात को बड़ी बेहूदी रागनी रेक रहा था, मेरी नीद उचट गई और उसकी दो-एक कड़ी मुझे अब तक याद हैः—

खुशामद ही से आमद है,
बड़ी इसलिए खुशामद है।
एक दिन राजाजी उठ बोले बेंगन बहुत बुरा है,
मैंने भी कह दिया इसी से बेगुन नाम पड़ा है,
फ़ायदा इसमें बेहद है,
बड़ी इसलिए खुशामद है।

दूजे दिन हुजूर कह बैठे, बेंगन खूब खरा है,
मैंने भी झट कहा, इसी से उस पै ताज धरा है,

नही होती इसमें भद है,
बड़ी इसलिए खुशामद है।
यदि राजाजी दिवस कहे तो दिनकर हम दमका दें,
जो वे रात बतावें तो फिर, चन्दा भी चमका दें,
इसी से हँडिया खदबद है,
बडी इसलिए खुशामद है॥

पशु-पक्षियों की 'पार्लियामेंट'

निर्जन जगल के विशाल मैदान मे, आधी रात के आध घण्टे बाद पशु-पक्षियो की एक महती सभा बैठी। इसमे सब प्रकार के पशु-पक्षियों के प्रतिनिधि शामिल थे। दर्शक-रूप से भी बहुत-से लोग विद्यमान थे। सभापति का आसन श्रीमान् वीरवर केसरीसिहजी ने सुशोभित किया था। जिस समय सभापति महाशय, चौधरी चीताराम, प० बघर्रामल और लाला लकडबग्घामल के साथ, सभामण्डप मे पधारे, उस समय प्रतिनिधियो के हर्ष का ठिकाना न रहा! सबने अपनी-अपनी भाषाओं मे उनका एक साथ स्वागत किया। रेकने, भोकने, चीखने, चिघाडने, रँभाने, बलबलाने, मिनमिनाने, चहचहाने आदि की सम्मिलित तुमुलध्वनि ने युगान्तर उपस्थित कर दिया! सबसे पहले श्रीमती लोमडी, श्रीमती बिल्ली और श्रीमती कुक्कुरीदेवी ने स्वागत-गान गाया। फिर मिस्टर भेड़ियाराम खडे हुए और आपने आध घण्टे मे सारा स्वागत-भाषण पढ डाला। सभापति महोदय ने उपस्थित प्रतिनिधियो को धन्यवाद देते हुए कहा—

"भाइयो, आज की सभा का उद्देश्य हजरत इन्सान से असहयोग करना है। इस दुष्ट के द्वारा, हम लोगो को जो घोर कष्ट पहुँचाया जाता है, उससे हम बहुत दुखी है। आत्म-रक्षा के उपायो पर विचार न करना कायरता है। मैं अपना भाषण पीछे दूंगा, पहले आप लोग निर्भय और निःसंकोच होकर अपने विचार प्रकट करे। देखिये, सभा मे गड़बड़ी न

होने पावे। विविध मत-सम्प्रदायो और सूरत-शकलों के प्रतिनिधियों की यह पहली 'पार्लियामेट' है। अतएव एक को दूसरे के भावो का पूरा ध्यान रखना चाहिये। एक बात और ध्यान मे रहे, हम लोग आपस मे भले ही मतभेद रखे, पर, इन्सान के मुकाबिले मे सब को एक होकर सयुक्त मोर्चा बनाना चाहिये। अच्छा, अब श्रीमती गायदेवीजी अपना भाषण देगी।"

गौरवशीला गोमाता

श्रीमती गोमाताजी ने पूँछ हिला कर रँभाते हुए कहा—'भाइयो, कैसे दुःख की बात है, मनुष्य मुझे पकड कर अपने घरो मे बाँध लेते है। मेरे आगे कूडा-करकट फेक कर सारा दूध गटक जाते है, मेरी प्रिय सन्तान देखती ही रह जाती है! सब जानते है कि माता का दूध उसके वच्चे के लिये होता है, पर, मेरा दूध दूसरो के लिए है। बुड्ढी होने पर मैं 'ब्राह्मण' को 'पुण्य' कर दी जाती हूँ। जहाँ से मेरा सीधा "स्लाटर हाउस" को चालान हो जाता है। मेरे पुत्र शीत-घाम की कुछ भी परवा न कर, पूर्ण पुरुषार्थ के पश्चात् रूखा-सूखा भूसा पाते है। इस घोर अन्याय का नाम मनुष्यो ने 'परोपकार' और 'गो-रक्षा' रख छोडा है। बाज आई मैं इस परोपकार से! मेरे खाने के लिए परमात्मा ने बहुत दिया है, मै नही चाहती कि परोपकार के 'पोटले' ये इन्सान मेरी जाति पर और अधिक अन्याय करे।

इस वक्तव्य का समर्थन, भाषण-पटु भैंस और विवेकशीला बकरी ने भी बडे मर्मस्पर्शी शब्दो मे किया और कहा—'दरअसल हमारे साथ घोर अन्याय होता है।'

श्रीगर्दभदेवजी

महाशयो, मेरी कथा न पूछिये, मेरे जीवन से तो मौत ही भली है। रात-दिन काम करना, पीठ पर डण्डे खाना, भूख से घबराना, बस, यही मेरी किस्मत मे बदा है! इतना घोर पुरुषार्थ करने पर भी हजरत इन्सान मुझे बेवकूफ कहकर पुकारता है, कान पकड़ कर बुलाता और डण्डे मार कर चलाता है। हे सभापति! मुझे इस घोर दुःख से बचाइये, मैं मर जाऊँगा, मुझे मनुष्य की यह 'परोपकारिता' नही चाहिये। सच समझिये, अगर मैं इतना परिश्रम, व्याकरण पढने मे करता तो, आज महामहोपाध्याय हो जाता, तप मे सहिष्णुता दिखाता तो तपस्वी बन जाता। परन्तु सज्जनो, हमारा तो लोक बना न परलोक! इतना कह कर श्रीगर्दभदेवजी का कठ रुंध गया और वे बीच मे ही बैठ गये!

कुँवर कुत्ताकुमारजी

सज्जनो, आप जानते है, मै भाई भेडिया का चचाजाद भाई हूँ। परन्तु इन्सान के कुसग ने मुझे परमुखापेक्षी और चापलूस बना दिया है। एक टुकडे की खातिर मुझे उसकी अजहद खुशामद करनी पडती है। यहाँ तक कि मैं अपने सगोत्री भाइयो से भी प्रेमपूर्वक वार्त्तालाप नही करता, बल्कि सदैव द्वेष दर्शाता रहता हूँ। पर, तो भी मुझे पेट-भर रोटी नही मिलती! हमारे कितने ही भाइयों ने, स्वामि-भक्ति के कारण इन्सान के लिए—टुकडो और केवल टुकडों के लिए—अपने अमूल्य शरीर बलिदान कर दिये, परन्तु इस खुदगरज कौम को हमारे हाल पर तनक भी तरस न आया! उसने मेरे विरुद्ध नाना प्रकार की किम्वदन्तियाँ गढ़ डाली! हमारा घोर अपमान

किया ! चाकरी को निन्दापूर्वक 'श्वानवृत्ति' के नाम से पुकारा और बुरी मौत को 'कुत्ते की मौत कहा ! क्या इसी का नाम कृतज्ञता है ? क्या सच्ची सेवा का यही प्रशसनीय फल है कि हम तो इन्सान के लिए प्राण तक देदे, अपने कुनबे को भी त्याग दे, परन्तु हजरत इन्सान रोटी के टुकडे तक से हमें महरूम रक्खे, और कभी कुछ खिलादे तो इस 'उपकार' पर फूले न समाएँ। मैं ऐसे नाशुकरे इन्सान पर लानत का प्रस्ताव पास करने की प्रार्थना करता हूँ।

भाई भेड़ियामल

उदार भाइयो, मुझे अपने चचेरे भाई कुत्ते की कष्ट-कथा सुन कर घोर दुःख हुआ। वास्तव मे, अपने जातीय गौरव को भूल कर, भाइयो का साथ न देने वालो की, ऐसी ही दुर्गति होती है। निस्सन्देह कुत्ता हमारा भाई है, परन्तु वह टुकडों की खातिर दूसरी कौम का गुलाम बन गया !

[नोट—यहाँ माननीय सभापतिजी ने भाई भेडियामल को यह कह कर रोक दिया—'तुम्हे अपनी शिकायते पेश करनी चाहिए थी, दूसरो के सम्बन्ध मे, आक्षेपपूर्वक कुछ कहने या उनकी आलोचना करने का अधिकार तुम्हे नही दिया गया।' यह सुनकर भाई भेडियामल उदास होकर बैठ गये। फिर हजरत हाथीखाँ को बोलने की आज्ञा मिली।]

हजरत हाथीखाँ

सज्जनो, हमने भी कम कारनामे नही दिखाये, पर, अब नयी रौशनी वाले इन्सान द्वारा हमारा जो निरादर है, उसे हम कह नही सकते ! भला कुछ ठिकाना है ! क्या इन्सान को अक्ल इसलिए मिली है कि वह 'अंकुश' के रूप मे, हमारे विशाल भाल

पर आक्रमण करता रहे। इतने बडे हम गजराजों के लिए यह शर्म की बात है! लोकतन्त्र-शासन के युग मे इस प्रकार अपमानित होना कोई पसन्द न करेगा। शिकार के समय हम अपनी छाती अड़ा देते है, पर, अपने ऊपर बैठे हुए इन्सान तक चोट नही आने देते। गहरी नदी मे खुद घुस जाते है, पर, अपने शासक सवार पर, छीटे नही पडने देते। जरा पुराना इतिहास उठा कर पढिये, हमारे कैसे-कैसे कारनामे है। आजकल के लोगों ने हमें जनाना बना दिया! हम भी देशी राजाओं की तरह, बस, योही कभी-कभी जलूसो की शोभा बढाने वाले दिखावटी समझे जाने लगे। हमारा सब शौर्य नष्ट किया जा रहा है। इतने बडे महायुद्ध हो गये पर हमारा उनमे नाम तक नही! इससे अधिक हाथियों का अपमान और क्या होगा? अगर मेरा बस चले तो, मैं इस 'अक्ल के पुतले' इन्सान की सारी समझ ठीक कर दूँ। भाइयो, साहस करो, अगर आप सब लोग लीद भी करदे तब भी उससे सारा मनुष्य-मण्डल दब सकता है। निरंकुश होते हुए भी आप एक अकुश के इशारे नाच रहे है, यह दुःख की बात है।

ठा० घोड़ासिंह

भाइयो और भाभियो, हमारी जाति ने इन्सान का अपूर्व हित किया है। जिस समय न 'मोटर' थी न 'साइकिल' और न हवाई जहाज थे, उस समय हम ही इन्सान को सर्वत्र घुमाते-फिराते थे। हमारी कदर भी बहुत होती थी, परन्तु जब से ये 'पोपो' या 'भोंभो' चली है, तबसे हमारी बहुत बेकदरी हो गई। जिन अस्तबलो मे पहले हम हर्ष से हिनहिनाया करते थे, आज उनमे 'पेट्रोलियम' की दुर्गन्ध आती है। ज्योही मनुष्य 'मोटरकार' खरीदने योग्य होता है, त्योही वह उसे खरीद कर हमे जवाव दें देता है! यह सक्रामक रोग बराबर बढ़ रहा है। रिकशाओ ने

तो और भी गज़ब ढादिया, ये 'फिट-फिट' करती हुई अलग हमारा जी जलाए डालती है। अगर यही दशा रही तो थोड़े ही दिनो मे हमारी कोई बात भी न पूछेगा, हम लोग 'किराये के 'टट्टू' से अधिक अपनी पोजीशन न रख सकेंगे। आप जानते है, 'टट्टू' नामधारी हमारे लघु भ्राताओ की कैसी दुर्गति है ? उनसे बोझ ढुलाया जाता है, कूड़ा उठाया जाता है, पाखाना फिकवाया जाता है, इक्को मे जोत-जोत कर उनके कमर-कन्धो पर जख्म कर दिये जाते है। भले ही मक्खियाँ भिनभिनाती रहें, पर, हजरत इन्सान को इससे क्या ? क्या यह हमारे उपकारो के प्रति घोर कृतघ्नता नही है ? क्या उदारचेता वीर-शिरोमणि 'चेतक' के कुल की यह दुर्दशा होनी चाहिये ? भाइयो, भावी आपत्ति का अभी से इलाज करो।

चौधरी उष्ट्रसिंह

भाइयो, क्या कहे इन्सान का बोझ ढोते-ढोते मरे जाते हैं; गाडियाँ खीचते-खीचते अक्ल हैरान है ! जिस मरुभूमि मे, हमारे प्रतिनिधि भाइयो में से कोई घूमना पसन्द न करेगा, उसमे हमें भभकती भूभल पर चलना पडता है। अगर हम न हों तो, इन्सान की सारी अक्ल ठिकाने आजाय। परन्तु तो भी हमारे चारे का कोई प्रबन्ध नही ! स्वयम् पत्ती तोडना और पेट भरना। काम तो लिया जाय पर खाना न दिया जाय, यह कहाॅ का इन्साफ है ? हमे मनुष्य की दयालुता नही चाहिये, हम तो उसके आश्रय के बिना ही अच्छे है।

इसके बाद सभापति श्री केसरीसिहजी ने कहा—'अब दूसरे वर्ग के प्रतिनिधि बोलेगे। पहले पक्षियो की 'स्पीच' होगी फिर बिल-वासियो को अवसर दिया जायगा।'

मि० तोताराम

सज्जनो, इन्सान कहता है कि मैं प्यार का पुतला हूँ, गुणों का ग्राहक हूँ। परन्तु यह सब उसका ढोंग है। आप जानते है, मेरी जाति के लोग बातून ज्यादा होते है, खूब मीठी-मीठी बाते बनाते है। बस, इसीलिए हजरत इन्सान ने अपने कन-रसियापन के कारण, 'अहिंसा' के नाम पर, हमें पिजडे में बन्द करना शुरू कर दिया! देखिये, पिंजरबद्ध बन कर मेरे भाइयो का सारा जीवन नष्ट हो गया! वे नही जानते कि स्वतन्त्र वायुमण्डल मे सास लेना कैसा होता है? हमारा स्वातन्त्र्य और स्वास्थ्य नष्ट करके मनुष्य कहता है—"मैंने पक्षियो की रक्षा की है! उनको दाना खिलाया और बचाया है! मैं परोपकार का पुंज और अहिंसा का अवतार हूँ!" परन्तु भाइयो, लानत है इस "परोपकार" पर जो हमे नष्ट-भ्रष्ट करके किया जाता है? परमात्मा जमीन पर रेगने वाली चीटी को भी खाना देता है तो क्या हम व्योम-विहारी होकर भूखों मर जायंगे! हम खुदगरज इन्सान की ऐसी बातो से बहुत तग है।

श्रीमती मैना देवीजी ने इस व्याख्यान का समर्थन किया। और भी कई पक्षियो ने बोलने को पङ्ख फडफडाये परन्तु सभापतिजी ने उन्हे यह कह कर रोक दिया कि 'समय थोड़ा है, सुबह होने वाली है, अतः अब बिल-वासी लोग कुछ कहे।'

१० चुहियाचरणजी

सज्जनो, मुझे अपनी जाति की दुर्दशा देखकर बड़ा दुःख है। आप जानते है कि प्रथम तो हमारे छोटे-से शरीर पर पृथुलतुन्द श्री गणेशजी को सवार करा कर देवताओं ने घोर अन्याय किया है। खैर, उनकी बात भी जाने दीजिये। ये अहिसाभिमानी मनुष्य

हमारे नाश का नित नया उपाय सोचते रहते है। कभी पिंजडों मे पकड कर हमारा नाश करते है और कभी हमारे घरो मे जहर की गोलियाँ पटकते है, जिससे हम मर जायँ। "अशरफ-उल-मखलूकात" इन्सान की इस हिमाकत से अब तक हमारे हजारो-लाखो भाई, अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर, परलोक वासी बन चुके है। ये भलेमानस यह नही समझते कि 'प्लेग' आने की सबसे प्रथम सूचना हम अपने शरीरो को बलि-वेदी पर चढा कर देते है। हमारी इस सूचना से जो लोग प्लेग-प्रभावित स्थान को छोड देते है, वे बच जाते है। इस उपकार का बदला हमे मिलता है—'सर्वनाश'! बलिहारी है इस इन्सानियत की! और देखिए, आज चारो ओर 'सुधार-सुधार' और 'उन्नति-उन्नति' का ढोल पिट रहा है, परन्तु कोई यह नही सोचता कि इन तरक्कियो के तरानो का 'श्रीगणेश' कहाँ से हुआ। भाइयो, बताइये यदि हम शिवरात्रि को, टंकारा के एक शिवालय की शिवमूर्ति पर, चावल चबा कर, मूलशकर को उपदेश न देते तो, ऋषि दयानन्द कहाँ से आते, और भारतोद्धार का सूत्रपात कौन करता! इन सब उपकारो का बदला इन्सान की ओर से हमे मिलता है—'सर्वनाश'! कैसे दु:ख और कितने परिताप की बात है?

वाचाल बन्दर और बीबी बिल्ली

दोनो ने एक स्वर से कहा, हमारी राय मे, हमारे पूर्व वक्ताओ ने हजरत इन्सान पर झूठे इलज़ाम लगाये है। हमे देखिये, हम स्वतन्त्रतापूर्वक चरते-विचरते हैं, और मनुष्य से खूब छीन-झपट कर खाते है, परन्तु हमारा कोई कुछ नही बिगाड सकता। बिल्ली ने कहा—'मैं तो घरो के कोने-कोने मे घुस जाती हूँ और खूब मौज उड़ाती हूँ।' बन्दर बोला—'हनुमान बन कर

गुडधानी खाना और गुर्राना हमारा काम है। बात वास्तव मे यह है कि इन्सान से बाजी मारने के लिए चातुर्य की ज़रूरत है, जो जितना ही सीधा-सादा होता है, वह उतना ही पिटता है। महाशयो, हमे इन्सान की कोई शिकायत नही।'

सभापति का भाषण

इसके बाद सभापति श्रीकेसरीसिंह का भाषण हुआ। आपने कहा—

'भाइयो, मैंने सब व्याख्यान ध्यानपूर्वक सुने। वास्तव में इस 'अशरफ-उल-मखलूकात' कहे जाने वाले इन्सान ने हम लोगों का नाक मे दम कर रखा है। आप लोगो की कष्ट-कथा सुन कर, मेरे दुःख का ठिकाना नही रहा! आप यह न समझे कि मेरी जाति के लोग पशुपति-परिवार के होने से सुखी है। हमारी जाति पर भी इन्सान का घोर अत्याचार होता है। हमे तो वह देख ही नही सकता, खबर लगते ही मारे गोलियो के हम हलाक कर दिये जाते हैं। हमे कठहरों में बन्द करके हमारी स्वाधीनता छीन ली जाती है। किसी समय हम सारे देश मे आनन्द से चरते-विचरते थे, पर, अब तो वेदज्ञों की तरह हमारे परिवार के लोग भी केवल कही-कही दिखाई देते हैं। इन्सान की जितनी शत्रुता हमारे वंश से है, उतनी किसी से नही। अभी आपने हजरत बन्दर और बीबी बिल्ली के व्याख्यान सुने, उन्होने इन्सान की हिमायत की है, पर इन भूले भाई और भटकी बहिन को यह नही खबर कि उचक्कापन करना या छीना-झपटी से काम लेना पशु-परिवार की वंशपरम्परा के प्रतिकूल है। इसके लिये मनुष्यो के 'राष्ट्र' नामधारी समुदाय ही बहुत है। क्या हजरत बन्दर कलन्दरों द्वारा लकड़ी के बल नही नचाये जाते? क्या उन्हें अपने पेट दिखा-दिखा कर टुकड़े नही माँगने पड़ते? इस घोर घृणित

व्यवहार पर भी वह इन्सान का पक्ष लेते है, शर्म की बात है ! (चारों ओर से शर्म ! शर्म !! शर्म !!!)

'बीबी बिल्ली का लुक-छिप कर इन्सान के जूठे बर्तनों को चाट लेना, या दाव-घात से कुछ खा-पी आना कोई गौरव की बात नही है। इसके लिए इन्हे अभिमान न करना चाहिए। अच्छा, मैंने अब खूब सोच लिया, और सबके उद्धार की एक बात सूझी है। महामहोपाध्याय श्रीगजराजजी और हम जैसे शक्तिसम्पन्न वीरवरो पर, काबू करना, हमारे अन्य बलहीन भाइयो को सताना, हमारे विनाश के लिए गोला-बारूद, तलवार, बन्दूक आदि बनाना ऐसी बाते है जो अल्पशक्ति मनुष्य की बुद्धि के कारण ही हो रही हे। बुद्धि न हो तो यह इन्सान साधारण कीट-पतङ्गो से भी घटिया दरजे का बना रहे। सारे अनर्थों की जड़ मनुष्य की बुद्धि है, इसलिए मेरी सम्मति मे इस महासभा से, यह प्रस्ताव पास करके, 'खुदावन्द ताला' के पास भेजना चाहिए कि वह इन्सान से अक्ल छीन कर, अपनी प्यारी प्रजा मे सुख-शान्ति स्थापित करे, और हम लोगो पर अत्याचार न होने दे।' उपस्थित समुदाय ने गगनगामिनी गर्जना-पूर्वक सभापति के प्रस्ताव का समर्थन किया और वह सर्व-सम्मति से पास हो गया। सभा बरखास्त हुई और सब लोग अपने-अपने घरो को सिधारे।

भारतीय मुछमुण्ड-मण्डल

होलीपुरा के 'हुल्लड़-पार्क' मे, "अखिल भारतीय मुछमुण्ड-मण्डल" का महाधिवेशन, खूब धूमधाम से मनाया गया। डेढ लाख निमुच्छे प्रतिनिधि सभामण्डप मे मौजूद थे। दर्शको के रूप मे, स्त्रियाँ, सन्यासी तथा बालक भी अधिक सख्या मे उपस्थित थे। स्वागत-भाषण के पश्चात् सभा के पति "हिज हैवीनेस" मिस्टर निमुच्छानन्द महाशय का प्रभावशाली व्याख्यान हुआ, जिसकी अविकल रिपोर्ट नीचे दी जाती है। स्वीकृत प्रस्तावों की सूची फिर छपेगी, पाठकों को उत्सुकता-पूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिये।

सभापति का भाषण

निमुच्छ महाशयो, आप लोगों ने आज मुझे इस "आल-इण्डिया मुछमुण्ड-महासभा" का प्रधानत्व प्रदान कर, अवश्य ही अपना कर्त्तव्य-पालन किया है। निस्सन्देह, मे सब दृष्टियो से इस 'मुच्छहीन-मजलिस' का मीर होने लायक हूँ। मुझसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति, इस काम के लिये आपको और कोई न मिल सकता था। इस कर्त्तव्य-पालन और खोज के लिये मै आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। परन्तु किसी प्रकार के धन्यवाद की आवश्यकता नही समझता। आज मुझे, इस बडी सभा मे, मुछ-मुण्डों को अधिक सख्या मे देख कर बडा हर्ष होता है।

आप जानते ही है, मेरी ६६ वर्ष की आयु हो गयी, परन्तु आज तक मनहूस मूछो को मेरे खूबसूरत चहरे पर, अपना कब्जा करने की जुरअत नही हुई। मै जानता ही नही कि मूछे क्या

होती है, और उनका कुल-सहार करने के लिए छुरा कैसे चलाया जाता है ? जैसा सुन्दर-सपाट चहरा आज से ५० वर्ष पूर्व था वैसा ही अब भी है। दाँत उखड गये है तो क्या है, बदसूरती तो नही आई, खाल सिकुड गई सही परन्तु उस पर बाल का अधिकार तो नही हुआ। ऐसी दशा मे मुझे मुछमुण्डता का "जन्मसिद्ध अधिकार" प्राप्त है, और मै ही अपने को इस सभा का सभापति होने का सबसे अधिक अधिकारी पाता हूँ।

आप लोगो ने भी मूछो का बहिष्कार कर बडा काम किया है। सन्तोष की बात है कि आप मे से कुछ सज्जन तो रोज और कुछ दिन मे दो-दो बार छुरे की पैनी धार से इन दुष्टाओ का दर्पदलन करते रहते है। आप सब मुछमुण्ड महाशयो से मेरा सविनय अनुरोध है कि जहाँ तक हो, और जब तक पेश चले मूछो के झाडझकार को मुखमण्डल पर न उगने दो। इनकी जड़ों पर उसी प्रकार कुठाराघात करो, जिस तरह चाणक्य ने कुश-मूल नष्ट करने के लिये किया था।

भाइयो, यह ठगिनी प्रकृति भी बड़ी विचित्र है, भला उसे इन मूछो के कूडे-करकट को, इस चमकते चहरे पर जमा करने की क्या जरूरत थी। इससे फायदा तो कुछ है ही नही, हाँ यह नुकसान जरूर है कि जिस समय से इन कर्कशाओ के काँटे, सुन्दर अधरो पर अकुरित होते हैं, उसी समय से ललित लालिमा पर कुत्सित कालिमा पुतने लगती है। ज्यो-ज्यो मूछों का दर्प वढता है, त्यो ही त्यो, उसका दलन करने के लिए, करो को कष्ट करना पडता है। जव तोड़ते-मरोडते, उखाड़ते-पछाड़ते, ऐंठते-अमेठते हुए भी आप लोग मूछो को कावू मे नही कर सके तभी तो उन्हे उस्तरे के घाट उतारने की सूझी। मगर, वाहरी निर्लज्जता! ये कम्वख्त इतनी वेशर्म हैं कि रज़ो

मुंह मसले जाने पर भी सिर उठाये बिना नही रहती! नित्य छुरा चलने पर भी अपनी शरारत से बाज नही आती!

मुछक्कड़ लोग कहते है कि बिना मूछों के चहरा बदसूरत हो जाता है, परन्तु यह उनकी कपोल कल्पना मात्र है। आप रात-दिन स्त्रियों, बालकों और सन्यासियो को देखते है, मैं तो समझता हूँ, इनकी सुन्दरता मूछो के न होने के कारण ही और बढ जाती है। आप लोग स्वयम् अपने सपाट मुँह पर हाथ फेरिये, शक्लो को शीशे मे देखिये, कितनी कोमलता और सुन्दरता मालूम होगी। अहा! टेढी-तिरछी, कपटी-चपटी, अकडती-सिकुडती, गुर्राती-हाहाखाती मूछों को मिटा कर, आपने मिथ्या भेद-भाव दूर कर दिया और सचमुच अपने को नवयुवक बना लिया है। इस समय आप लोगो के निमुच्छे मुख-मण्डलो से अपूर्व कान्ति टपक रही है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से तो मूछो का विधान बहुत ही बुरा है। इस बात का कटु अनुभव मुछक्कडो को जुकाम के वक्त या दूध पीते अथवा रायता सपोटते समय होता है। सारी मूछें सन कर बरसाती छप्पर की तरह, टपकने लगती हैं। जो लोग 'सिगरेट' पीते है, उन्हे तो इनकी बड़ी ही हिफाजत करनी पड़ती है, कही इन तक आँच न आ जाय। कभी-कभी तो ये कम्बख़त खुद चुरट की चिता में पड कर खामख़ाह 'सती' हो जाती है। ऐसी दशा मे, महाशयो, मैं नही समझता कि मूछों के पक्ष मे लोग क्यों अपनी सम्मति दिया करते है।

जिस समय वृद्धावस्था पदार्पण करती है, उस समय ओठों पर 'तिल-चामरी' मूछे उसी प्रकार दिखाई देती है, जिस प्रकार किसी मनहूस मैदान में खडी, गोरे-कालों की पिटी पिटाई पल्टन! ज्यो-ज्यो स्याही पर सफेदी पुतती जाती है, त्यों ही त्यो चहरा,

राजपूताने की मरुभूमि-सा बनता जाता है। कैसा ही सुन्दर, सुडौल, सजीला मुख-मण्डल क्यो न हो, भूरी मूछे सारा मजा मिट्टी मे मिला देती है। कोई 'बाबा' कहता है तो कोई 'नाना', कोई वृद्ध कहता है तो कोई 'बुजुर्ग'। कालौंच के किले पर सफेदी का झण्डा क्या फहराता है, सारा नकशा ही बदल जाता है! तभी तो तग आकर महाकवि केशवदास ने कहा था—

> केशव 'मूँछन' अस करी, जस अरि हूँ न कराहि;
> चन्द्रवदनि मृगलोचनी, 'बाबा' कहि-कहि जाहि।

सो भाइयो, इन 'बाबा' बनाने वाली, वैरिनो से भी बढकर मूछो से बचो, इन सब आपत्तियो से बचने की एकमात्र अमोघ औषधि 'मुछमुण्डता' है—और कुछ नही।

निर्मुच्छ महाशयो, आपको मालूम है कि भारत के भूत वाइसराय लार्ड कर्जन ने मूछो पर छुरा चला कर किस प्रकार अपने नाम के पीछे 'मुछमुण्ड फैशन' (कर्जन फैशन) चलाया? इसकी कथा बडी विचित्र हूँ। सुनिए, एक दिन मुछक्कड कर्जन अपनी नवपरिणीता प्रियतमा के कोमल कपोलो पर प्रेम-पीयूष प्रवाहित करने लगे, इतने मे ही उनकी पत्नी ने, प्रेमपगी वाणी मे झिडक कर कहा—"Are you kissing me or brushing me?" "प्राणनाथ! आप प्यार कर रहे है, या अपनी मूछो के कडे वालो की कुची से मेरे चेहरे पर खुरहरा करते है?" बस, प्राणप्यारी के ये युक्तियुक्त समीचीन शब्द सुन कर कर्जन साहब ने अपनी मूछो को उस्तरे की नज़र कर दिया और फिर आजन्म उनका आदर न किया! आज आप लोगो को उसी 'मुछमुण्ड महाशय' के अनुयायी होने का गौरव प्राप्त है। परमात्मा 'मुछमुण्डमत' के आद्याचार्य लार्ड कर्ज़न और उनकी

प्रियतमा पत्नी की आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करे, जिन्होने हमारे ऊपर ऐसा बडा उपकार किया।

मुछमुण्ड महाशयो, यह कोई विनोद नही है, इसे कपोल-कल्पना न समझिये। अगर आप प्राचीन और नवीन इतिहास के पृष्ठ पलट कर देखेगे तो, आपको सर्वत्र 'मुछमुण्डता' की ही महिमा दिखाई देगी। ससार के उद्धार-कर्त्ता मर्यादापुरुषोत्तम राम सदैव मुछमुण्ड रहे, आनन्दकन्द व्रजचन्द श्रीकृष्णचन्द ने कभी मूछो से सहयोग नही किया। मै चेलेज देकर पूछता हूँ कि क्या ससार मे कोई राम या कृष्ण की ऐसी एक भी तस्वीर अथवा मूर्ति दिखा सकता है, जिससे उनकी 'निमुछमुण्डता' सिद्ध होती हो। सारे अजायबघर (म्यूजियम) देख डालिये, 'सारनाथ' का सार निकाल लाइये, पर अहिंसा के प्रबल समर्थक महात्मा बुद्ध की प्रतिमा के मुँह पर कही मूछों के कूडे-करकट का ढेर दिखायी न देगा। परम दार्शनिक शंकराचार्य के चहरे को देखिये, मूछो का चिह्न तक न मिलेगा। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का चहरा साफ नजर आवेगा। आधुनिक युग के सबसे बडे सुधारक ऋषि दयानन्द ने भी इस झाड-झङ्कार को आदर नही दिया। अमर शहीद स्वीमा श्रद्धानन्द के सुन्दर-सपाट-मुख-मण्डल को पवित्र स्मृति कैसे भुलाई जा सकती है।

धार्मिक संसार ही नही, राजनैतिक जगत् का भी मुलाहिजा फरमाइये। राष्ट्रिय महासभा के मच पर, राष्ट्रपति की स्थिति से जिन्होने भाषण दिए है, उनमे अधिकाश हमारे मत के अनुयायी निमुच्छ महाशय ही थे, और है। दूर क्यो जाते हो, वर्त्तमान काल मे आँखे पसार कर देखिये, सी० आर० दास, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, श्रीनिवास आयगर, सी० वाई० चिन्तामणि, श्रीनिवास शास्त्री, विपिनचन्द्र पाल, राज-

गोपालाचार्य इत्यादि—सैकडो नेता 'मुछमुण्ड-दल' के ही अनुयायी है। जो सज्जन अभी इस समुदाय के सदस्य नही बने वह धीरे-धीरे बनते जा रहे है। विलायत मे जहाँ देखो वहाँ निर्मुच्छापन ही दिखाई देता है। राजनैतिक और धार्मिक क्षेत्र से बढ कर, यह निर्मुच्छता साहित्य-क्षेत्र में भी विहार करने लगी है। आप गौर से देखे, बदरीनाथ भट्ट, लक्ष्मीधर वाजपेयी, वियोगी हरि, शिवप्रसाद गुप्त, श्रीराम शर्मा, रामनरेश त्रिपाठी, पन्तजी, मैथिलीशरण गुप्त, अमरनाथ झा, श्रीनारायण चतुर्वेदी, कृष्ण-कान्त मालवीय, राधामोहन गोकुलजी इत्यादि—साहित्य-सेवियो के मुँह से मूछे के सीग की तरह उड गयी, और उड़ती जा रही है। 'हर्ष की बात है कि अब राजाओ मे भी यह सुप्रथा प्रचलित हो चली है, और सबसे प्रथम, श्रीमान् बड़ौदा नरेश और राजा रामपालसिह साहब ने इस ओर अपना पवित्र पग बढाया है।

मुच्छहीन महाशयो, मैने ये दो-चार उदाहरण दिये है, बहुत मिसालो से व्याख्यान बढ जायगा, समय थोडा रह गया है। 'स्थाली पुलाक न्यायेन' इतने से ही आप लोग सब कुछ समझ लीजिये। कोई भी अच्छी प्रथा देश मे कठिनाई से प्रचार पाती है। 'मुछमुण्डता' का विस्तार भी धीरे-धीरे ही होगा, परन्तु होगा अवश्य यह हमारी ध्रुव धारणा है। विना मुछमुण्डता के देशोद्धार हो ही नही सकता। सबको इस पथ का पथिक बनना ही पड़ेगा। मुझे भय है कि कही कट्टर हिन्दू यह न कह बैठे कि इसने हँसी-खुशी के अवसर पर निर्मुच्छपन की कैसी बकवाद कर डाली! मूछें तो शोक मे मुडाई जाती हैं। हाँ, इन लोगो को समझाने के उद्देश्य से मैं 'भरमी' कवि के शब्दो मे कहूँगा—

जिहि मुच्छन धरि हाथ,
कछू जग सुयश न लीनो।
जिहि मुच्छन धरि हाथ,
कछू जग काज न कीनो।
जिहि मुच्छन धरि हाथ,
कछू पर पीर न जानी।
जिहि मुच्छन धरि हाथ,
दीन लखि दया न आनी।
मुच्छ नांहि वे पुच्छ हैं,
कवि 'भरमी' उर आनिये।
नहिं वचन-लाज नहिं दान-गति,
तिहि मुख मुच्छ न जानिये।

बोलो, कमाया कुछ जग में 'सुयश' ? किया कोई ससार का 'काज' ? मिटाई दुखिया माता की 'पीर' ? की दीनो पर 'दया'। पाले 'वचन' और दिया 'दान' ? नही—तो फिर ? फिर क्या, इन 'पूँछ रूपी मूछों' को मुडाओ और पशुता का कलक मिटाओ ! इस दृष्टि से भी मूछो की कोई आवश्यकता नही है ! शोक ?—शोक की अच्छी कही, जिसका दस-बीस रुपये का माल कोई छीन लेता है, उसके शोक का ठिकाना नही रहता। परन्तु जहाँ करोड़ो लाल चिथड़ों और टुकडो के लिए तरस रहे हो, लाखो विधवाएँ बिलबिला रही हो, और अगणित अनाथो का ठिकाना न हो, सहस्रों भाई अकाल मृत्यु के मुँह मे पड़ रहे हो वहाँ शोक तो क्या हर्ष होगा ? पारिवारिक शोक मे तो दो-चार कुटुम्बी ही मूँछें मुड़ाते है; इस देश के शोक मे तो सारे देशवासियो को 'मुछमुण्ड' बनना चाहिये। यही मेरी प्रार्थना है।

बस, अब मैं अपने अभिभाषण को सदाशापूर्वक समाप्त करता

हूँ। समाप्त करने के पूर्व एक बात बता देना चाहता हूँ—मेरे पास 'मुछमुण्ड-सभा' के कुछ अनुपस्थित सदस्यो के तार आये हैं, जिन्होने इस महासभा के कार्य की सफलता चाही है, और साथ ही लिखा है कि 'मुछमुण्ड' नाम बहुत बुरा है, कर्णकटु है। उसे बदल कर महासभा का कोई शुद्ध-सस्कृत नाम रख दिया जाय। इन तार भेजने वालो मे—मठो के जगद्गुरु, वृन्दावन तथा गोकुल के गोस्वामी, अयोध्या के रामफटाका आदि है। मेरी सम्मति मे 'मुछमुण्ड' के स्थान मे 'सखी-सम्प्रदाय' नाम ठीक रहेगा। यह नाम मुझे तो उपयुक्त जंचता है, आप लोग अपनी सम्मति दे। उपस्थित सदस्यों ने 'ठीक-ठीक', 'स्वीकार'-'स्वीकार' कह कर 'सखी-सम्प्रदाय' का समर्थन किया और इस प्रकार मिस्टर निमुच्छानन्द का प्रभावशाल भाषण समाप्त हुआ। बोलो 'सखी-सम्प्रदाय' की जय!

अगुआ की आत्म-कथा

(१)

वकालत का था बड़ा गुमान,
इसी पर हो बैठा वीरान।
मगर यह हप्पो चली न हाय,
बन गया मै पूरा असहाय।

(२)

नौकरी लगी न कोई हाथ,
बडा था कुनवा मेरे साथ।
घूमता रहा काटता काल,
हाल सब हुआ, हाय ! बेहाल !

(३)

मिला साहब से सौ-सौ बार,
न पाया तो भी उसका पार।
सही घुडकी, झिड़की, फटकार,
अन्त में गया हौसला हार।

(४)

तिजारत का भी किया विचार,
बिना धन कैसे हो व्यापार ?
न कोई करता था विश्वास,
क़र्ज़ की त्याग चुका था आस।

(५)

कर रही थी महँगी रसभंग,
छिड़ी थी निर्धनता से जंग।
किसी पर चढ़ता देख न रंग,
हुआ अब और काफ़िया तंग।

(६)

अन्त में जगी देश की भक्ति,
मिली फिर मुझे अनोखी शक्ति।
देश-दुर्दशा बखान - बखान,
तोड़ने लगा निराली तान।

(७)

कभी साहित्य-सिन्धु का जन्तु,
कभी था धर्म-ध्वजा का तन्तु।
बजा कर राजनीति का ढोल,
चढ़ाता रहा पोल पर खोल।

(८)

बोलता था जब मैं किलकार,
मेज़ पर मचल, दुहत्थड़ मार।
समझते थे तब सब अनजान,
"देश पर होगा यह कुरबान"।

(९)

मगर मै चलता था वह चाल,
न होता बाँका जिससे बाल।
दिया उपदेश, किया आराम,
यही था बस मेरा 'प्रोग्राम'।

(१०)

'लीडरी, में है हां आनन्द,
इसी से है वह मुझे पसन्द।
प्रतिष्ठा पाता हूँ चहुँ ओर,
मचा कर ज़ोर-ज़ोर से शोर।

(११)

मिली है जनता रूपी गाय,
बड़ी भोली-भाली है हाय!
दुहा करता हूँ मैं दिन-रात,
न 'कपिला' कभी उठाती लात!

(१२)

भर गया अब मेरा भण्डार,
हुआ संकट-सागर से पार।
सुखों का सिन्धु हुआ परिवार,
किया जनता ने पुनरुद्धार।

(१३)

रेल का पहला, हुआ क्लास,
हमारा बना प्रवासावास।
गाड़ियाँ - ताँगे दिये बिसार,
ख़रीदी बढ़िया 'मोटरकार'।

(१४)

बनाई कोठी विशद विशाल,
सजाये सुन्दरता से 'हाल'।
विदेशी है सारा सामान,
छोड़ कर खादी के कुछ थान।

(१५)

देवियां हैं ऐसी शौकीन,
माँगतीं वस्त्र महीन-महीन।
न भाता उन्हें स्वदेशी माल,
इसी से है यह उनका हाल।

(१६)

धार कर विमल-विदेशी 'सूट',
छाटता हूँ 'डासन' का 'बूट'।
'घरेलू' है यह मेरा वेश,
न इस पर उचित विवाद विशेष।

(१७)

मगर है 'पब्लिक लाइफ' और,
न उसमें कहीं ठेस को ठौर।
पहन कर खद्दर की पोशाक,
जमाता हूँ जनता पर धाक।

(१८)

'छींक दूँ' या लूँ कहीं 'डकार',
खटक जाता है, त्योंही तार।
जियें जुग-जुग देशी अखबार,
कर रहा मेरा यश-विस्तार।

(१९)

किया मैंने अपना उद्धार,
कमाकर 'कीर्ति' और 'कलदार'।
इसी विधि करे अगर सब देश,
न बाक़ी रहे क्लेश का लेश।

(२०)

जाति को करना है स्वाधीन,
लिखो तब, लेख नवीन-नवीन।
शब्द-शर और कोप की 'तोप',
इन्हीं से है, उन्नति की 'होप'[१]।

(२१)

हाथ में ले लो कलम-कुठार,
निकलने दो मुँह से फुतकार।
मारना मत 'कर्तव' की डींग,
नहीं तो निकल जायगी सींग।

१—आशा।

काव्य-कण्टक का कोप

(१)

मुझे क्यो कवियों का सरताज,
न कहते सम्पादक महाराज !
सुखा कर सेरों अपना खून,
भेजता नये-नये मजमून ।

(२)

न छापा तुमने अब तक एक,
भला यह कैसी अनुचित टेक ।
अगर तुम आओ मेरे पास,
दिखा दूँ, अपना मै अभ्यास ।

(३)

अभी बीते है दो रविवार,
लिखे हैं पोथे जिन मे चार ।
किलर्की करतो इतना काम—
करूँ; पर हाय ! न होता नाम ।

(४)

कभी भारत-दुर्दशा निहार,
मुझे होता है दुःख अपार ।
कभी कामिनि-किङ्किनि झनकार,
श्रवण कर, मार[1] मारता मार ।

१—कामदेव ।

(५)

कभी करुणा का बहता सोत,
कभी कटुता का चलता पोत।
कभी मृदुता की तरल तरङ्ग,
उमड़ती कभी भक्ति की गङ्ग।

(६)

हृदय का चित्र भाव-उद्गार,
सभी का कविता है आधार।
हुए जब अति प्रसन्न भगवान्,
तभी की कविता-शक्ति प्रदान।

(७)

बन गया मै कविता का कूप,
फटकने लगा शब्द, ले सूप।
नाप डाले ले गज, सब छन्द,
न तो भी हुआ काफ़िया बन्द।

(८)

न सहती अलकार का भार,
न देखी रस की सुन्दर धार।
भाड़ में झुकी भाव-भरमार,
सादगी है कविता का हार।

(९)

व्याकरण-बिल्ले का सिर फोड़।
पिंगली-पिल्ले का धड़ तोड़।
जानकारी की जान मरोड।
कुदकती है कविता कर होड।

(१०)

पढ़ेंगे एक वार यदि आप,
कहेंगे—"है यह व्यर्थ प्रलाप"।
"न भाषा शुद्ध न भाव-प्रधान",
यही है कविता की पहचान"।

(११)

नष्ट हो कविता का शृङ्गार,
भ्रष्ट हो चाहे सारा सार।
छापना कर लो, पर, मंजूर,
अर्ज है- यह हुजूर पुरनूर।

(१२)

नाम का मोटा छापा छाप।
दिखाना मेरा काव्य - कलाप।
भेजना अंक अमूल्य पचास।
पठाने है मित्रो के पास।

सजीव रोगों के अजीब नुसखे !

आजकल शारीरिक रोगो के साथ और भी कितने ही तरह के रोग बढ रहे है, जिनकी चिकित्सा न होने से देश की बडी हानि होने की सम्भावना है। इसी विचार से श्रीहत—नही नही—श्रीयुत बाबा अविद्यानन्दजी महाराज ने कुछ परीक्षित प्रयोग हमारे पास प्रकाशनार्थ भेजे है, जो यहाँ मुद्रित किये जाते है। आशा है, ये नुसखे रोगियो के लिए लाभकारी सिद्ध होगे।

लीडरतोन्माद

निदान—यह बडा भयकर रोग है, इसका वेग होने पर, रोगी के दिल-दिमाग काबू मे नही रहते। कभी रोगी आदमियो की भीड़ मे चीखता है, कभी कागज पर कुछ घसीट-घसीट कर डाकघर के बम्बे मे बहाता है, कभी तार बाबू को तग करता है, और कभी सरकार के साथ जग करता है। मरज ज्यादह बढ जाने पर कभी-कभी रोगी अपने घर, नगर से बाहर भी भाग जाता है और फिर वहाँ चीखता-पुकारता फिरता है।

चिकित्सा—लीडरतोन्माद के रोगी को कौन्सिल के कटघरे में बन्द कर देना चाहिये और उसे 'शोहरत' के शर्बत मे, चन्दे की चाशनी मिला कर, प्रत्येक पाँच पल के पश्चात् चटानी चाहिये। अकर्मण्यता का चूर्ण भी हितकर होगा। ऐसा करने से दस-पन्द्रह वर्ष मे उसे आराम हो जायगा। बाबा अविद्यानन्दजी इस नुसखे की कितने ही बीमारों पर अनेक बार परीक्षा कर चुके है। सब नीरोग हो गये!

'ऐडिट-अड़ङ्ग' या 'संपादन-संहार'

निदान—'एडिट-अड़ग' अथवा 'सपादन-सहार' का रोगी दुनिया-भर के झगडे-बखेडे लोगो को सुनाया करता है। 'लीडर-तोन्माद' और 'व्याख्यान-व्याधि' के रोगियों को पिटते देख यह बुरी तरह रो पडता है ! कभी किसी की प्रशसा के पुल बॉधता है, तो कभी किसी की निन्दा की नदी बहाता है। तिल का ताड़ और ताड का तिल बनाने मे इसे बडी खुशी होती है। जब इसे जोर का दौरा होता है, तो, बस, 'सुधार-सुधार' और 'सदाचार-सदाचार, बकना शुरू कर देता है।

चिकित्सा—'सम्पादन-सहार' आगन्तुक रोग है, इसलिए आयुर्वेदशास्त्र मे इसका वर्णन नही है। इसका इलाज विदेशी चिकित्सा-पद्धति के अनुसार होता है। डाक्टर लोग इस रोगी को '१३५ ए' के एकुए मे 'प्रिजन-पिल्स' (कैंद) या 'फाइन' (जुरमाना) का फास्फोरस' मिला कर पिलाया करते है। कभी-कभी 'वी० पी०,-बहिष्कार-वटिका' का प्रयोग भी लाभदायक सिद्ध होता है।

'विकालत-व्रण'

निदान—यह मरज तो बहुत फैलता जाता है, छोटे-बडे सब शहरो मे इसके मरीज मिलते है। बड़ा सक्रामक रोग है। भारतीय विश्वविद्यालयो के लॉ लेक्चर इस रोग के कीटाणु और भी अधिक बढा रहे है। विकालत-व्रण का रोगी कराहता वहुत है, इसे बात-बात मे मीन-मेख निकालने की बुरी आदत पड जाती है ! वीमार लोग रोज चार-पॉच घण्टे के लिए क़ानूनी शफाखाने मे जमा होते है। वहॉ एक को कराहट दूसरे को बहुत बुरी लगती है। कभी-कभी तो ये लोग कानूनी डाक्टर के सामने

खड़े-खड़े खूब कराहते, चीखते और चिंघाडते है। मगर यह जीभो की लपालपी उसी वक्त तक रहती है जब तक व्रण मे दर्द की शिद्दत रहती है, ज्यो ही दर्द कम हुआ त्यो ही फिर गुर्राहट बन्द हो जाती है, और एक दूसरे के दर्द का शरीक बन जाता है। इन रोगियो मे एक बात खास होती है, ये लोग खुद तो आपस मे तड़क-भड़क करते ही रहते है, पर, दूसरे अच्छे-भले आदमियों को लड़ते-झगडते और सर पटकते देख बहुत खुश होते है। इस विषैले व्रण के कारण अक्सर असत्य का ज्वर चढ़ आता है।

चिकित्सा—विकालत-व्रण के रोगी को महनताने के मधु मे शुकराने का शर्बत मिला कर पिलाना चाहिये। 'मवक्किल-मरहम' का फाया रखने से तो बहुत जल्द फायदा हो जाता है। साधारण व्रण के लिये 'पबलिक-पुलटिस' भी कारगर हो जाती है। देशोद्धार की ठेकेदारी मिल जाने पर भी यह रोग शान्त हो जाता है। जहाँ तक हो, लोगो को इनके इस छूत के रोग से दूर रहना चाहिए, क्योकि यह उड कर लगने वाला मरज है।

'कविता-कण्डु' (खाज)

निदान—यह मरज भी बड़ा मूजी है, इसमे फँस कर रोगी घर का रहता है न घाट का। इस बीमारी मे एक प्रकार की 'गुंगवाय'-सी हो जाती है। मरीज उठता-बैठता, सोता-जागता यहाँ तक कि न्हाने-खाने मे भी 'गुन-गुन' करता रहता है। अपनी करतूत को कागज के टुकड़ो पर अङ्कित देख मुँह फाडकर खिलखिला पडता है। इस रोग का जल्द इलाज करना चाहिये।

चिकित्सा–'कविता-कण्डु' के रोगी को सोने-चाँदी के पदक पीस-कर शोहरत के शहद के साथ चटाने चाहिये। कभी-कभी प्रशसा-पत्रो की पर्पटी या पुरस्कारो की पुड़िया देने से भी

लाभ होता देखा गया है। उपाधि का अवलेह तो इस व्याधि को तुरन्त दूर कर देता है।

'व्याख्यान-व्याधि'

निदान—यह रोग बडा भयानक है, रोगी हर वक्त कुछ न कुछ बडबडाया करता है। हुक्का, सिगरट, शराब, जुआ, चोरी आदि अपराधो को देख-सुन कर तो रोगी को एक दम भयकर दौरा हो जाता है, जो लाख चिकित्सा करने पर भी शान्त नही होता। देश की दशा पर रोगी रोता-चिल्लाता है। सामाजिक दोषो को देखकर उसे बुरी तरह फुरफुरी आती है।

चिकित्सा—व्याख्यान-व्याधि के रोगी को 'गौरव-गिलोय' के काढे के साथ 'प्रशसा-पिल्स' खिलानी चाहिये। अकर्मण्यता का अर्क तो इस रोग के लिए बहुत ही लाभदायक है। कभी-कभी 'सर्व-श्रेष्ठता' का स्वरस भी बहुत हितकारी साबित होता है। सब ओषधियाँ व्यर्थ सिद्ध होने पर, इस रोगी को '१४४' धारा की अमृत-धारा पिलानी चाहिये, बस, तुरन्त आराम हो जायगा।

'करमफोड़ कम्बख़्तराय'

(१)

पढ़ कर अँग्रेजी भरपूर,
भारतीयता कर दी दूर।
निज संस्कृति का मेंट निशान,
बन बैठा बेढब विद्वान्।

(२)

टूटी कमर झुक गये कंध,
हुआ तीन चौथाई अंध।
सूखा पेट सिकुड़ कर आँत,
पिचके गाल चमकते दाँत।

(३)

'कैमिस्ट्री[1]' सब डाली घोट,
'साइन्सो[2]' को गया सपोट।
पका न पाया रोटी-दाल,
क्रिया-कुशलता का यह हाल।

(४)

'अर्थ-शास्त्र' का हूँ आचार्य,
फिरूँ खोजता सेवा-कार्य।
बन जाऊँ दासों का दास,
दे-दे कोई रुपये पचास।

१—रसायन शास्त्र, २—विज्ञान।

(५)

'हिस्ट्री[1]' चाट भखा 'भूगोल',
पर, इनका कुछ मिला न मोल।
याद रही है बस यह बात—
"हिन्दी थे वहशी-बदज़ात"।

(६)

'रेखा', 'अङ्क', 'बीज' से विज्ञ,
कहलाऊँ प्रसिद्ध गणितज्ञ।
तो भी बनियाँ करे कमाल,
ठगे, न तोले पूरा माल।

(७)

पाने को पूँजी की 'पर्स[2]',
पढ डाली सारी 'कौमर्स[3]'।
'बुककीपिंग[4]' का बूँका मार,
हुआ न मेरा बेडा पार।

(८)

मुण्डी पढे करें आनन्द,
बैठे लिखें लगाय मसन्द।
पर, मै हूँ बिलकुल बेकार,
आफिस मिले न साहूकार।

१—इतिहास, २—थैली, ३—वाणिज्य विद्या, ४—अंग्रेज़ी बही-खाता।

(९)

बना 'डाक्टर' आया जोश,
भर दूंगा सम्पति से कोश।
पर, 'पेशेंट[१]' न आवें पास,
कह-कह मुझको 'खब्तहवास'।

(१०)

'टीचर[२]' बना मनाया हर्ष,
ज्यों-त्यों काटा पहला वर्ष।
छात्र पढ़ाये करके टेक,
सौ में पास हुआ बस एक।

(११)

लेकर कर्ज किया व्यापार,
बेचे बिस्कुट, सेब, अनार।
किये न लोगो ने 'पेमेंट[३]',
घाटा सहा 'सेंट पर सेंट[४]'।

(१२)

अखबारो की उन्नति देख,
लिखने लगा लेख पर लेख।
छपा न कोई भी कम्बख्त,
हैं 'एडीटर' ऐसे सख्त।

१—रोगी, २—अध्यापक, ३—भुगतान, ४—सौ फीसदी।

(१३)

'प्रीचर'-'प्रीस्ट[1]' बना मन मार ,
काटे मास तीन या चार ।
करता रहा 'गौड[2]'–गुणगान ,
गाते-गाते थकी जबान ।

(१४)

मिलता नही कहीं कुछ काम ,
पास नहीं है एक छदाम ।
ऐसे कुसमय में करतार ,
सुन ले नीचे लिखी पुकार—

(१५)

"लीडर बनूं, फिरूं स्वच्छन्द ,
कर दो द्वार दुखो के बन्द ।
स्वार्थ और परमार्थ पसार ,
करता रहूँ देश-उद्धार ।"

१—व्याख्याता-पुरोहित, २—परमेश्वर ।

इस तरह का बेहूदा बकवाद 'गुनाहेअजीम' समझा जाता है। मुआफी माँगो और आगे से ऐसी अण्ड-बण्ड बाते न बकने का अहद करो।

सुधारक—नही साहब, यह रोशनी का जमाना है, हमें जो कुछ कहना है, जरूर कहेगे। सचाई से आप किसी को नही रोक सकते। माना कि आप समर्थ और स्वामो है, पर, हम स्वतन्त्र मत प्रकट करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझते है।

दम्भदेव—अरे, कोई है जो इस मुहजोर का मुँह सीधा करे। (जोर से चिल्लाता है) "उद्दण्डसिह!"

उद्दण्डसिह—महाराज! क्या आज्ञा है?

दम्भदेव—(सुधारक की ओर इशारा करके) इस गुस्ताख को पकड़ कर ले जाओ, और हवालात मे बन्द कर दो। बडा नामाकूल है, भङ्गी और चमारो को उठाना चाहता है—उन्हे गले लगाने की बात बकता है।

उद्दण्डसिह—बहुत अच्छा, सरकार! (धक्का देकर सुधारक की गरदन पकड़ता है।)

सुधारक—याद रक्खो हम कच्चे खिलाडी नही है जो तुम्हारी धमकियो से अपना उसूल छोड़ दे—'कुम्हड़बतियाँ' नही है जो 'तर्जनी' देखकर मुरझा जाये। अरे, यह शरीर बड़ी-बडी आफतों का इस्तकबाल कर चुका है; सैकड़ो सकटो का केन्द्र बन चुका है, पर, उफ नही की—

"'सिदाक़त के लिए गर जान जाती हो तो जाने दें,
मुसीबत पर मुसीबत सर पै आती हों तो आने दें।'

दम्भदेव—ले जाओ! ले जाओ! इस सचाई के सिरकटे को,

कैदखाने मे, ले जाओ ! वहाँ पडा-पडा सडता रहेगा, या इसकी अक़्ल ठिकाने आ जायगी ।

सुधारक—दम्भदेव ! आप क्या कहते है ? भला इन गीदड भभकियो से कुछ हो सकता है ? देखो—"यह वह नशा नही जिसे तुरशी उतार दे ।"

दम्भदेव—अरे उद्दण्ड ! इसे कालकोठरी मे क्यो नही ले जाता ?

उद्दण्ड—अन्नदाता ! दीवान दुर्जनमल आ रहे है, अभी जाता हूँ ।

(दीवानजी का प्रवेश)

दुर्जनमल—(दम्भदेव को प्रणाम करके) इस बँधुए से क्या गुस्ताखी बन गई, महाराज ! जो श्रीमान् का मुखमडल कुछ क्रुद्ध-सा दिखाई देता है ।

दम्भदेव—यह गँवार सुधारकों का सरदार बनता है, चमारो, और भगियो को गले लगाने की बात बकता है ।

दुर्जनमल—शिव ! शिव ! बडा बज्जात है, महाराज !

दम्भदेव—और शोखी इस कदर कि अपनी गलती मानकर माफी तक नही माँगता, बल्कि अपनी नाजायज हरकत पर ज़िद करता है ।

दुर्जनमल—हरे कृष्ण ! वासुदेव ! इतनी ढिठाई और ऐसी निर्लज्जता ! तो क्या इसे कालकोठरी मे भेज रहे है, हुज़ूर !

दम्भदेव—हाँ—

दुर्जनमल—अन्नदाता की जो आज्ञा है, वही ठीक है, पर, मेरी सम्मति मे, तो, इसका जेल जाना ठीक न होगा । वहा यह खायगा और गुर्रायगा, दूसरे कैदियो को भी भडकायगा । बहुत सख़्ती की जायगी तो 'भूख-हडताल' कर देगा ।

दम्भदेव—फिर क्या किया जाय ?

दुर्जनमल—महाराज, इस बेवकूफ ने "पच-पुराण" द्वारा सस्थापित बिरादरी-बिलडिग की बुनियाद हिलाने की कुचेष्टा की है, अतएव यह कौमी कौसिल के 'वर्ण-विपर्यय' एक्ट की ७४९ वी धारा के अन्तर्गत आता है।

दम्भदेव—हाँ-हाँ यह तो बहुत ही सगीन जुर्म है। इसके लिए तो मामला पचराज के सुपुर्द करना पडेगा।

दीवान—महाराज की जय बनी रहे, यही मेरा मतलब है।

दम्भदेव—अच्छा, लाल लिफाफा लिखो, और मुकद्दमे को फ़ैसले के लिए पचराज की पचायत मे भेज दो।

(भेजा जाता है)

दूसरा दृश्य

(स्थान पचपुरी)

(पंचराज का दरबार)

जाति-पाँति का ही आधार,
है सारी उन्नति का सार।
छूत-छात का छोड़ घमण्ड,
बकते हैं, जो-जो उद्दण्ड।
सब को पकड जेल में ठेल,
देखो, खूब निकालो तेल।

पचराज—(दहाड कर) देखो, कलजुग मे कोई धर्म-भ्रष्टता के गीत न गाने पावे, जाति-पाँति का जितना विस्तार हो सके करो, सम्प्रदायवाद को इतना फैलाओ कि एक-एक घर मे छह-छह मतवाले दिखाई देने लगे। खबरदार !

अछूतो का कोई नाम भी न ले, अगर ले भी तो उसी वक्त हलक में 'फनायल' डाल कर तुरन्त जीभ साफ की जाय।

चमारों को चढ़ाता है, भंगी को भिड़ाता है,
उन्नति के अखाड़े में, वह टाँग अड़ाता है।

मन्त्री—महाराज ! यह घोपरणा सव को सुना दी गई। श्रीमान् की कृपा से खूब विरादरीवाद फैल रहा है, छूत-छात ने वडा आनन्द कर रक्खा है, मादकता की मृदुलता से सारा ससार मुग्ध हो रहा है।

पचराज—ह ह ह ह ! हाँ, तो हमारा आतङ्क अच्छा काम कर रहा है।

मन्त्री—महाराज- वहुत ज्यादह ।

(द्वारपाल का प्रवेश)

द्वारपाल—(मन्त्रीजी से) अन्नदाता ! यह लाल लिफाफा है और वाहर पॉच सिपाहियो समेत एक आगामी भी मौजूद है।

मन्त्री—(लिफाफा पढकर हर्ष और आतङ्क से) सव को जल्द लाओ। (सव आते है)।

पचराज—क्यों बे बेहूदे तू क्या बकता था ?

सुधारक—मैं नेकनीयती से लोगों का सुधार करता रहता हूँ, वैसे ही गीत भी गाता हूँ। आजकल अछूतो के उठाने का आन्दोलन जारी है। बस, इसी बात पर मुझे पकड लिया गया है !

पचराज—हॉ ठीक है ! "इसी बात पर !"—मानो, यह कुछ है ही नही !

सुधारक—साहब, मैंने चौरी नही की, जारी नही की, डाका नही डाला, और भी कोई बुरा काम नही किया— फिर ....

पचराज—(बडे जोर से हँस कर) ह ह ह ह ! (मन्त्री की ओर मुँह करके) देखा, कैसा बेवक़ूफ है ! अपने कसूर को चोरी, जारी, डाका वगैरह से भी कम समझता है।

मन्त्री—हॉ, हुजूर ! देखिये न ! मेरी राय मे तो अब चपरपचजो को बुला लिया जाय, जिससे वह इस आसामी से जिरह करले और फ़ैसला सुना दिया जाय।

पचराज—हॉ, ठीक है, बुलाओ।

(चपरपच का प्रवेश)

चपरपच—(पचराज से) महाराज की जय हो ! हाजिर हूँ, हुजूर!

पचराज—अच्छा, चपरपच, इस आसामी से हमारे सामने जिरह करो।

चपरपंच—(जो आज्ञा कहकर आसामी (सुधारक) की ओर मुख़ातिब-हुए और हाथ मे 'मिसल' लेकर पूछने लगे) हॉ, तो, तुनने पच-पुराण द्वारा सस्थापित बिरादरी बिल्डिग की बुनियाद हिलाने की चेष्टा की थी !

सुधारक—मैंने "अछूतो को अपनावेंगे, गिरो को गले लगावेंगे" सिर्फ यह गीत गाया था।

चपरपच—हाँ—वही बात, हमने सब बाते मिसल मे पढ ली है। अच्छा, तो तुम्हारा अछूतो को उठाने से क्या मतलब है ?

सुधारक—यही कि उनको पढाया-लिखाया जाय, सुनागरिक बनाया जाय, उनसे घृणा दूर की जाय।

चपरपच—इस तरह करने से तो बिरादरी बरबाद हो जायगी, भगियो से घृणा न की जायगी, तो सब सरभङ्गी बन जायँगे।

सुधारक—वह भी तो हिन्दुओ के भाई है, चोटी रखते है, राम और कृष्ण को मानते है, अपने को हिन्दू कहते है। घृणा की क्या बात है, अब भी तो किसी न किसी रूप मे लोग उनको छूते ही है, और उनके हाथ का खाते भी है।

चपरपच—यह और बात है।

सुधारक—मैं इन लोगो से मदिरा छुडाता हूँ, उन्हे और भी बुरे कामो से रोकता हूँ। आप देखते है कि, सहस्रो शिखा-सूत्रधारी छिप-छिप कर शराब पीते है—

चपरपच—यह और बात है।

सुधारक—रात-दिन बिरादरी मे गुप्त रूप से कुकर्म हो रहे है, पर कोई कुछ नही कहता।

चपरपच—यह और बात है।

सुधारक—बडे-बडे धोती लटक्कू लोग चमारो का गुड गटकते, रेवडी कुटकते, बताशे सटकते और न जाने किस-किस के हाथ बने शरबत डकार जाते है, पर उनसे कोई कुछ नही कहता।

चपरपंच—यह और बात है—

सुधारक—बेटी बेचने वालो की सख्या बढती जाती है, बुड्ढों के विवाह हो रहे है, विधवा बिलबिला रही है, पर, इस ओर दम्भदेव का ध्यान नही गया।

चपरपंच—यह और बात है—अच्छा अब चुप रहो। तुम्हारी बाते सुन ली, तुम बड़े मुँहजोर हो, कोई ढङ्ग की बात नही कहते।

पंचराज—अच्छा, मन्त्रीजी, अब इसका बकवाद बन्द करो, मैं बहुत जल्द सजा तजवीज करता हूँ।

मन्त्री—बहुत अच्छा, हजूर! 'चुप रह रे, रेकुए।'

पचराज—हाँ, तो, इसने पच-पुराण द्वारा संस्थापित बिरादरी-बिल्डिग की बुनियाद हिलाने की प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से चेष्टा की है—उस बिरादरी की जो सैकडो-हजारों बरसो से बडे-बडे पापकाण्डो को देखती हुई भी हमारी खातिर जिन्दा है—उस बिरादरी की जिसने अपने अस्तित्व के आगे किसी पाप-पुण्य का कभी विचार नही किया—उस बिरादरी की जो बडे-बडे आचारहीनों को भी छाती से लगाकर सदैव उन्हे आश्रय देती रहती है—उस बिरादरी को जिसमे पतित से पतित भी मूछों पर ताव देकर, साम्यवाद का उपदेश कर सकता है—उस बिरादरी की जिसने विधवाओ की बिलबिलाहट देख कर भी उनके विवाह की व्यवस्था देने का अपराध नही किया—उस बिरादरी की जिसने जरा-जरा सी बातो पर लाखो लोगो को बाहर कर अपना औचित्य पालन किया! हाय! हाय! ऐसी परम पावन कल्पलता को यह सुधारक-सुग्गा बात की बात मे उखाड फेकना

चाहता है ! गजव ! अच्छा, मत्री इसे पॉच साल के लिये जेल मे ठेल दिया जाय ।

मन्त्री—हुजूर ! यह तो वहुत थोडी सजा है । एक-दो, दस-पाँच आदमियो के कत्ल करने की कोशिश करने वालो को इतने दिन का दड दिया जाता है, पर, इसने तो 'पच-पुराण' द्वारा प्रतिष्ठित सारी बिरादरी को ही उलट देने का मन्सूवा वॉध लिया था, इससे लाखो लोगों की जान का नही ईमान का ख़तरा था ।

पचराज—(आश्चर्य से) वेशक ! हमारी सरकार 'दीन-ओ-ईमान' की हिफाजत के लिए तो कायम ही है । अच्छा, तुम्ही वताओ कातिल से भी ज्यादा कसूरवार आततायी को क्या सजा दी जाय ?

मन्त्री—महाराज ! मेरी राय मे तो इसे बिरादरी से वाहर कर देना चाहिये । इससे उसके महाभयङ्कर प्रयत्न का प्रशमन हो जायगा, और हुजूर के कौमी कोड मे भी यही "कैपिटल पनिशमेंट" है ।

पचराज—अच्छा ! अच्छा !—मजूर ! रेकुआ विवाह-शादी मे न वुलाया जाय, विरादरी से अलग, हुक्का-पानी वन्द, न्योता न दिया जाय और किसी तरह का व्यवहार इसके साथ न रखा जाय ! मन्त्रीजी हमारी इस आज्ञा को 'हुलड-हैरल्ड' में छपवा कर 'मिसल' दम्भदेव के दरवार मे भेज दो, और अव इस अभियोग का अन्त करो ।

(परदा गिरता है)

बुढ़ऊ का ब्याह

प्रथम अक

पहला दृश्य

स्थान—पतितपुरा

लम्पटलाल—सच समझना भाई, दुर्मतिदेव ! वडा बुरा समय आ गया ! चारों ओर से कर्ज ने मुझे कस लिया है, तकाजों के मारे नाक मे दम है, शर्म से गडा जाता हूँ, और आफतों से मरा जाता हूँ ।

दुर्मतिदेव—हाँ सेठजी, इसमे क्या सन्देह है, आपका घराना कोई मामूली था क्या ? इस चौखट पर ऐसे-ऐसे काम हो चुके है कि जिन्हे दुनिया याद करती रहेगी । लेना-देना तो लगा ही रहता है । परमात्मा की कृपा से आप शीघ्र ही उऋण हो जाएँगे और फिर सभी तरह आनन्द होगे ।

लम्पटलाल—क्या बताऊँ महाराज ! बडी मुसीवत है । लडके छोटे-छोटे है । अब लडकी भी विवाह योग्य हो गई, उसकी फिकर अलग सताये डालती है । आखिर विवाह-शादी के लिये भी तो रुपयो की आवश्यकता होगी ।

दुर्मतिदेव—सब भगवान् भला करेगा । आपके लडके बडे हुए जाते है, जायदाद न रही, न सही । आफत आने पर रिश्तेदारों से सहायता लेकर काम चला लेते है । आप भी ऐसा ही कीजिए, सारा कर्ज चुक जायगा ।

लम्पटलाल—आपद्धर्म में सब कुछ करना पडता है । मगर मेरा

तो ऐसा कोई रिश्तेदार है भी नही जो इस आडे वक्त मे सहायता दे सके।

दुर्मतिदेव—लडको के सम्बन्ध अच्छी जगह करलो, खूब दहेज आयगा और काम बन जायगा।

लम्पटलाल—महाराज, आप भी कैसी बातें करते है। भला एक कगाल के घर कौन अपनी लडकी ब्याह देगा! सो भी वैश्य जाति मे, और वह भी हमारे यहाँ ?

दुर्मतिदेव—"सो भी वैश्य जाति मे" यह क्या कहा ? क्या बनियो मे विवाह नही होते ?

लम्पटलाल—होते क्यो नही ? पर, हम जैसे गरीब कर्जदारो के यहाँ नही, जिनके यहाँ न गहना है न कपडा।

दुर्मतिदेव—नही, सेठजी! तुम्हारे लडके तो बारह-बारह चौदह-चौदह बरस के ही है, पर, हमने तो हिन्दू जाति मे बूढो तक के विवाह होते देखे है।

लम्पटलाल—भाई वे बेटी वाले को रुपये गिनाते और शादी कराते है। मेरे पास धन होता तो रोना ही क्या था। फिर तो बीसियो नाइयो और पुरोहितों के टट्टुए मेरे घर के घेरे मे हिनहिनाते नजर आते।

दुर्मतिदेव—अच्छा, मै समझ गया, ठीक है! तुम और सब छोड कर पहले चतुर चम्पा का विवाह करो। फिर, इस हवेली मे रुपयो की कमी न रहेगी। बस और सब विचार त्याग दो।

लम्पटलाल—हे भगवान्, ऐसा कौन अमीर अन्धा होगा जो इस टूटी झोपडी मे आकर अपना मौर उतर वायेगा और मुझे मालामाल बनायेगा।

दुर्मतिदेव—इसका प्रबन्ध मै करा दूँगा आप निश्चिन्त रहिये। रात अधिक हुई, अब सो जाइये।

लम्पटलाल—अच्छी बात है।

(दोनो जाते है)

दूसरा दृश्य

स्थान—निकृष्ट नगरी

द्रव्यदास—(हाथ मे चिट्ठी लेकर) हाय, गजब हो गया, सकट का सागर उमड पडा, आसमान से अङ्गारे बरसने लगे, धरती कॉप उठी! ६५ साल की उम्र मे सातवॉ विवाह किया था सो 'वह' भी मर गई! भगवान्! अब मैं किसका होकर रहूँगा और कौन का पति कहलाऊँगा? हाय! मेरा सत्यानाश हो गया! अरे—हाय! मै किसी काम का न रहा रे—राम—अब ये धन-दौलत किस काम आवेगी—हे राम!!!

(रोता है)—

मोधू मुनीम—अजी, सेठजी! इतने क्यों घबराते हो, बिगड़ा घर फिर बस जायगा, धीरज से काम लो, सब्र रक्खो। ऐसी भी क्या व्याकुलता!

भोंदूभक्त—लाला द्रव्यदास, ससार की गति ऐसी ही है। पुरानी पैर की जूती जाती है और नई आती है। भरे रहे आपके भण्डार और चहिए ख़र्च करने को रुपया। बस मामला ज्यो का त्यो हो जायगा।

निदुरिया नाई—सेठजी, अहन रोइविन का का काम। हमारे महल्लामां एक पण्डित दुर्मतिदेव रहन करिन तौन सब काम करि दीन। कहौ तौन बोलाय लाईन।

मोघू मुनीम—चुप रह रे निदुरिया। जिस समय सेठानी बीमार थी और रिजर्वगाडी मे सोलन सेनोटोरियम भेजी गई थी, उसी समय हमने अगली आपत्ति सोच कर सब काम ठीक कर लिया था।

भोंदूभक्त—और क्या! मुनीमजी बडे चतुर-चूड़ामणि है। इन्हे अक्ल के पुतले और बुद्धि के विशारद कहना चाहिए।

द्रव्यदास—(आँसू पोछ कर) अच्छा तो कोई है लडकी? मुनीमजी जल्द उद्योग करो, रुपये की चिन्ता मत करना, जो चाहो सो खर्च करना।

मोघू मुनीम—हाँ-हाँ सेठजी, आप धीरज धरिये और सेठानीजी के क्रिया-करम से फारिग हो लीजिए—सब काम हो जायंगे। जाइये, रोटी खाइये, और पानी पीजिये। ओरे निदुरिया नाई—सेठजी को न्हिलाने के लिए ताजी पानी ला और पूजा का सामान रख।

निदुरिया—बहुत अच्छा, मुनीमजी!

(सब जाते हें)

तीसरा दृश्य

स्थान—मुनीमजी का मकान

[निकृटनगरी]

अनजान आदमी—(जोर से पुकारता है) मोघू मुनीम मकान मे है क्या—मोघू मुनीम?

मोघू मुनीम—आया—कहिए क्या बात है? आपका नाम?

अनजान आदमी—मेरा नाम प० दुर्मतिदेव ज्ञानसागर है।

मोघू मुनीम—प्रणाम महाराज! आपकी तो बडी प्रतीक्षा थी।

निदुरिया को आपके पास कई बार भेजा था पर आप मकान पर मिले नही।

दुर्मतिदेव—हाँ, मैं पतितपुरा में पण्डिताई करने गया था। वहाँ से आज सबेरे ही आया हूँ। सुना है, दाता द्रव्यदास की इस पत्नी का भी देहान्त हो गया!

मोधू मुनीम—हाँ! महाराज, बड़े रंज की बात है, सेठजी बहुत दुखी है।

दुर्मतिदेव—रंज और दुःख किस बात का! मुनीमजी! वह सेठानी अपनी जान से गई, अब दूसरी दुलहिन उन्हे मिल जायगी। कहो है लाख की चौथाई गिनने को तैयार?

मोधू मुनीम—बड़ी खुशी से—रुपये की क्या कमी! और फिर इस काम के लिए! मामला पक्का कीजिए और आप भी अपनी दक्षिणा लीजिए।

दुर्मतिदेव—सब ठीक-ठाक है। पतितपुरा के लम्पटलाल की लडकी के सम्बन्ध की बातचीत हो जायगी। ढाई हजार मुझे देने पड़ेगे। बोलो क्या कहते हो?

मोधू मुनीम—मजूर! मजूर! चलो पतितपुरा, दिखाओ लड़की और कराओ उसके बाप से बाते।

दुर्मतिदेव—चलिये, और कुछ रुपये भी साथ ले लीजिये।

मोधू मुनीम—जरा ठहरिये—हाँ चलिये-चलिये, निदुरिया नाई का इन्तजार था वह भी आ गया। चलबे जल्दी चल! नाक पर दीया जलाकर घर से निकला है।

चौथा दृश्य

स्थान—निकृष्ट नगरी

(सेठजी की हवेली)

द्रव्यदास—कहिये मुनीम मोधूमलजी, कुछ उद्योग किया? भोदूमल तो कहते थे कि मुनीमजी परसो पतितपुरा गये है, सो वहाँ कामयाबी हुई या यो ही चले आये?

मोधू मुनीम—सेठजी, सव काम ठीक है, इन प० दुर्मतिदेवजी ने बडा उद्योग किया है। लडकी देख ली गई है और उसके बाप से बातचीत भी हो गई है। मामला बीस हजार पर ठहरता है—कहिए क्या कहते है?

द्रव्यदास—अरे—उसकी उम्र क्या है? कुछ खूबसूरत भी है या यो ही—रुपये-पैसे की कोई चिन्ता मत करो, वीस हजार ही सही पर शादी तो इसी शरदपूनो को हो जायगी न।

दुर्मतिदेव—नही सेठजी, शरद पूनो का विवाह, जो है ते नही बने हैगा। कुछ दिन पीछे देवठान पर हो जायगा।

मोधू मुनीम—देवठान ही सही।

द्रव्यदास—बहुत लम्बी बात चली गई—देवठान के अब से तीन महीने है—पर खैर—जब ही सही।

भोदूभक्त—महाराज दुर्मतिदेवजी, अब की बार आप ऐसे घडी-मुहूर्त विचारें कि सेठजी को यह विवाह फूलना-फलना हो।

मोधू मुनीम—हाँ, पण्डितजी, यही मेरी प्रार्थना है।

दुर्मतिदेव—भगवान् ने चाहा तो ऐसा ही होगा।

मोधू मुनीम—सेठजी क्या आज्ञा है? आप कहैं तो दुर्मतिदेव के साथ निदुरिया नाई को आधे रुपये लेकर पतितपुरा भेज दें।

भोदू भक्त—और क्या ? मामला पक्का हो जाय और नेग-टेहले शुरू होने लगे।

द्रव्यदास—हाँ-हाँ मुनीमजी, कह तो दिया। रुपये की कोई बात नही, विवाह जल्दी होना चाहिये।

मोधूमल—अच्छी बात है, भगवान् की दया से विवाह जल्द होगा। पण्डितजी, आप निदुरिया नाई को लेकर पतितपुरा जायँ और लाला लम्पटलाल से सब बाते तय कर आवे।

दुर्मतिदेव—(कान मे धीरे से) मामला तो सब ठीक ही है। सगाई-लगुन सब साथ-साथ आवेगी। इन बीस हजार मे से ढाई हजार मैं अपने घर रख जाऊँगा।

मोधूमल—(कान में) ढाई हजार मैं अपने यहाँ रक्खे लेता हूँ। (कान मे) सुनरे-निदुरिया तू भी कुछ रुपये अपने बाल-बच्चो को देता जा। लम्पटलाल को तो सिर्फ १५ हजार देने है न। पंजा अब दे आओ और दहला विवाह के वक्त (प्रकट) हाँ तो समझ गये न आप। मैंने जो कान मे कही है वे सब बाते पहले ही तय कर लेना जिससे विवाह के समय गड़बडी न हो।

दुर्मतिदेव और निदुरिया—हाँ-हाँ साहब, सब बाते लो, सब।

(जाते है)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—पतिततपुरा का बाजार

(बारात की अगवानी)

मोधूमल—अरे ढोल-ताशे वालो! जरा-जोर से बाजे बजाओ। क्या मुरदे की तरह हाथ चलाते हो! पीछे हटो, आगे अङ्गरेजी बाजे वाले आवेगे।

भोंदूमल--अरे डण्डे वालो! इधर आओ, सेठजी की पालकी के पास रहो। देखा, ससुर फुलवाडी वाले कैसे इधर-उधर चल रहे है--अरे इधर आओ, जरा कतार बाँध कर चलो।

निदुरिया नाई——मुनीमजी—जे आतिशबाज ससुर पुरुआ-पटाखे और गोलान कूँ ऐसे धडाके ते छुडाय रहिन के सेठजी उछर-उछर पडिन--डरप रहिन।

मोधू मुनीम—अबे चल-चल, सेठजी की पालकी का पीछा न छोड। जा उनके पास।

द्रव्यदास—(पालकी मे से) अरे मोधू-मोधू, देखना, कही किसी बराती को तकलीफ न होने पाये। राय बहादुर मुक्काराम और सेठ चक्कूचरन की ख़ूब खातिर रखना और उन नाचने-गाने वाली औरतो को भी न भूल जाना। भडकीले भाँड आये कि नही?

मोधू और भोंदू—सब आ गये! सब ठीक है, आप चिन्ता न करे।

द्रव्यदास—हाँ, तुम जानो तुम्हारा काम। देखना, किसी को तकलीफ न हो, मैं तो यहाँ दूल्हा बना बैठा हूँ।

दाताराम—(हाथी पर से) मुनीमजी! मुनीमजी! कम सुनते हो क्या? अरे, वखेर के लिए कुछ थैलियाँ और भिजवाओ, पहली सब समाप्त हो गई।

मुनीमजी—अच्छा, अच्छा अभी आती है, घबराओ मत, यह लो वे आ गये थैलीदार, अब खूब वखेर करो।

स्वागतसिह—वस-वस, वाजे वालो यही रुक जाओ, वरात इसी मकान मे ठहरेगी। आगे कहाँ जा रहे हो?

(सब लोग स्वागतसिह के वताये जनवासे मे ठहर जाते है)

छठा दृश्य

स्थान—पतितपुरा का-नीतिनिवास महल्ला
(समय ६ बजे रात्रि)

धर्मवती—(अपने पति धर्मदेव से) आज तो लाला लम्पटलाल के यहाँ बडी भारी बरात आई, बुड्ढे वर ने खूब खाक उडाई, बडे बाजे बजे और धडाके की धूमधाम हुई। शर्म नही रही इस पापी को! राम! राम! रुपये गिन कर बुड्ढे को बेटी ब्याह दी! भाड़ में झोंक दी! न जाने इस नीच का कैसे भला होगा?

धर्मदेव—अरे इस लम्पट पापी का नाम मत लो! जिस समय उस बुड्ढे खुर्राट वरना को बारात के साथ पालकी मे बैठे देखा, तो लोग बुरी तरह ऊकने-थूकने लगे। लानतों के मारे उसका नाक मे दम कर दिया।

धर्मवती—अजी, उस बेजोड बूढे वरना को मैंने भी देखा था, और भी सैकड़ो स्त्रियाँ इस अघटित घटना को देख रही थी। लम्पट ने बड़ा पाप कमाया! कंचन-सी कन्या हौलू 'हौआ' के हवाले कर दी! राम! राम! कहाँ चतुर चम्पा और कहाँ ये बूढ़ा बन्दर!

सुखदा—(धर्मवती की बहन) अरी, जीजी! जब वह बूढा बन्दर पालकी मे बैठा, पोपला मुँह चलाता और चुन्धी आँखे चमकाता था तब तो बड़ी ही हँसी आती थी। हाय! हाय! लम्पटलाल ने बड़ी ही नीचता की। ऐसे नराधम न जाने क्यों भू-भार बढाने को आते है।

धर्मदेव—इस बूढ़े बन्दर को कुछ न · · अरे रामसुख (छोटा भाई) यह शोर काहे का हुआ? हल्ला क्यो मचा? दौड़,

जल्दी पता लगाकर ला क्या बात है ?

दीनदयालु—(धर्मदेव का मित्र घबराता हुआ आता है) लालाजी गजब हो गया ! लम्पटलाल की लडकी चम्पा ने साडी मे आग लगा ली । उसकी मा कुएँ मे गिरने को तैयार है ।

धर्मदेव—(आश्चर्य से) क्यो, क्या बात हुई ?

दीनदयालु—अजी, उस बूढे वर को देख कर सारे पुर-परिवार मे शोक छा गया । चम्पा और उसकी मा के सकट का तो पारावार हो न रहा ।

धर्मदेव—आखिर बात क्या हुई ?

दीनदयालु—बात क्या हुई ? रुपयो पर धामकधचा हो जाने से फेरे पडने मे विलम्ब हुआ, लडाई की नौबत आ पहुँची ! चम्पा दुखी होने लगी और वह किसी बहाने से दूसरे कमरे मे चली गई । वहाँ उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल उडेल कर कपडो मे आग लगा ली और जल मरी ! इस दुर्घटना से नगर और घर मे कुहराम मच रहा है । शोक के शौले फूट निकले है ?

धर्मदेव—हाय ! उस कन्या को अपने उद्धार का अन्तिम उपाय बलिदान ही सूझा ! वह लम्पटलाल की लम्पटता पर लात मार कर स्वर्गगामिनी हुई, परमात्मा ऐसी विशुद्ध बालिका को अवश्य सद्गति देगा । वह तो बड़ी पुण्यशीला .... ।

रामसुख—लीजिये साहब ! सारा मामला पलट गया ! विवाह के स्थान पर चम्पा की अरथी कसी जा रही है । लम्पट-लाल बेटी को नही रुपयो के लिए रो रहे है । "हाय-

हाय !" मची हुई है। घर वालो को तो इस बुड्ढे विलौटे के विकराल रूप तथा लेने-देने की कुछ खबर ही न थी। उन्हे तो १६ वर्ष का वर बताया गया था। चम्पा भी इसी बात को सुनती रहती थी। यह तो सब लम्पट लाला की लम्पटता और दुर्मति वाह्मन की दुर्मति का कुफल निकला !

धर्मदेव—चलो, लम्पट के मकान पर चले और वहाँ सब घटना देखे।

(सब गये परन्तु घर मे "हाहाकार" होता देख उल्टे पैरो चले आये। इस समय तक बारात वापस हो गई थी।)

सातवाँ दृश्य

स्थान—धर्मशाला

(पतितपुरा और निकृष्टनगरी के पचासो पंच बैठे पचायत कर रहे हैं)

देवीदत्त—आशा है, आप लोग लम्पटलाल और द्रव्यदास सम्बधी दुर्घटना का हाल ज्ञात कर चुके होगे। चम्पा के वलिदान की चर्चा भी सुन ली होगी।

देवप्रकाश—अच्छी तरह सुन चुके है, अब आप चम्पा की मृत्यु-वार्ता का वर्णन कर पचो को न रुलाइये, उन नीच नराधमो का नाम न लीजिये, हमारे कान पके जाते है और कलेजा कॉप रहा है।

सत्यदेव—अब तो इस पचायत को यह फैसला देना चाहिए कि इस दुर्घटना से जिन-जिन पापियो का सम्बन्ध है और जिन के कारण यह हुई है, उनका सदा के लिए बहिष्कार किया जाय, उनकी शक्ल देखने तक मे पाप समझा

जाय। उनसे सब प्रकार के सम्बन्ध-विच्छेद कर दिये जायँ। सम्भव हो तो इन नीचो के पुतले बना-बना कर जलाये जाय, इन्हे नीचातिनीच समझा जाय। कहिए है मजूर ?

पचायत—"मजूर, मजूर, मजूर" ऐसे पापियो का यही हाल होना चाहिये।

देवीदत्त—नही साहब, इतने से काम न चलेगा। आगे ऐसी दुर्घटनाएँ न हो इसके लिए भी कुछ प्रबन्ध सोचना चाहिए।

वीरभद्र—प्रबन्ध क्या ? इस समय यहाँ सब जातियो से सम्बन्ध रखने वाले, पचास गाँव के हजारो आदमी बैठे है। अगर सब की राय हो तो इस समय यह तय किया जाय कि भविष्य मे बाल-विवाह तथा वृद्ध-विवाह करने वालो का कोई साथ न दे और ऐसी शादियो मे शामिल होना पाप समझा जाय।

चन्द्रसेन—नही साहब, इतना और कीजिये कि अगर यह पता लग जाय कि किसी विवाह के लिये रुपये लिये गये हे तो उसमे कोई शरीक न हो।

वीरभद्र—हाँ, यह वात भी मानने लायक है, कहिये साहब, आप लोग क्या कहते है। है प्रस्ताव स्वीकार ?

सव लोग—हाथ उठाकर—"मजूर, मँजूर, मंजूर।"

देवीदत्त—अगर इन पचास गाँवो मे से कोई आदमी ऐसी शादियों मे शामिल हुआ तो उस पर ५००) जुरमाना किया जायगा।

सव लोग—"जरूर किया जाय, मजूर।"

चन्द्रसेन—देखिये, जोश में नही होश में आकर हाथ उठाइये, कही पीछे प्रतिज्ञा-भ्रष्ट न होना पड़े ।

सब लोग—नही साहब, खूब समझ लिया है, ऐसे क्रूरकाण्ड देख कर कलेजा कॉपता है, भला कौन पापी होगा जो इस प्रकार के नीच कर्मो का साथ दे ।

नित्यानन्द—सुनिए साहब, सुनिए, देखिए यह दीनदयालुजी क्या कहते है । हॉ, साहब, जरा जोर से फरमाइये जिससे सब सुने ।

दीनदयालु—आज भीमपुरा की कचहरी में बडा विचित्र दृश्य था । लम्पटलाल और द्रव्यदास दोनो गिरफ्तार हो गये, पुलिस ने उन्हे पकड कर हवालात मे भेज दिया । यह सब चम्पा के बलिदान के कारण ही हुआ है । सुना है, उस 'विवाह' मे सहयोग देने वाले और भी कई आदमियो पर आफत आने वाली है ।

पँचराज—इसमे ताज्जुब की कोई बात नही है । जो आदमी जैसा काम करता है, उसे वैसा ही फल भी मिलता है । चम्पा निर्दोष थी, उसने अपना शरीर बुड्ढे वर के सुपुर्द न कर अग्नि देवता के अर्पण कर दिया ! वह धन्य है । अच्छा, अब सब बाते तय हो गयी, यह पचायत समाप्त की जाती है । (सब लोग जाते है) ।

स्वर्ग की सीधी सड़क !

घूमता-फिरता मैं सीधा हृषीकेश के जगलो मे जा पहुँचा। देखता क्या हूँ, एकान्त टीले पर, एक बाबाजी समाधि लगाये बैठे है। वे अपने ध्यान मे निमग्न है, उन्हे कुछ भी खबर नही कि ससार मे क्या हो रहा है, और ससार मे वह है भी कि नही। मैं बाबाजी के पास आध घण्टे बैठा रहा। इतने मे ही, न जाने कब की लगी हुई उनकी समाधि टूटी। बाबाजी ने मेरी ओर बड़ो दया-दृष्टि से देखा। मैंने चरणस्पर्शपूर्वक उन्हे प्रणाम किया। वे बोले—

'बच्चा !—तुम कौन हो ?'

'महाराज !—मैं भी एक सासारिक कीट हूँ।

'यहाँ कैसे आये ?'

'आपके दर्शनो को, लौकिक ताप से तप कर आत्मिक शान्ति के लिए।'

'नही, अभी तुम इस बखेडे मे मत पडो, ससार का काम करो।'

'महाराज !—मेरी आत्मा बडी अशान्त रहती है, कुछ ऐसे भ्रम है जिनका निवारण नही होता।'

'अच्छा, बैठो, मैं अभी पानी पीकर तुम्हारी शङ्काओ का समाधान करता हूँ—

कुछ ही देर बाद बाबा विचित्रानन्दजी ने पानी पीकर मुझसे कहा—'बोलो तुम्हारी क्या-क्या शङ्काएँ है, एक-एक करके कहते जाओ।'

मैं—महाराज ! 'परोपकार' क्या है ?

बाबा—खूब आराम से रहना और पाखण्ड-पूर्वक स्वार्थ-साधना करना।

मैं—'मुक्ति' कैसे प्राप्त होती है ?

बाबा—खूब धन कमाने से।

मैं 'स्वर्ग' कहाँ है ?

बाबा—'सिविललाइन्स' मे और अङ्गरेजो की कोठियों मे।

मैं—'नरक' किस जगह है ?

बाबा—हिन्दुओं के घरों मे।

मैं—'धर्म' क्या है ?

बाबा—ससार की सब से सस्ती और निरर्थक वस्तु।

मैं—'धर्म' कब पालन करना चाहिये ?

बाबा—मृत्यु के समय—जीवन-समाप्ति में जब सिर्फ १० मिनट शेष रह जायँ, तब।

मैं—ऋषि-मुनि कौन है ?

बाबा—जिन्होने ३३ फीसदी नम्बरो से कानूनी और डाक्टरी परीक्षाए पास की है।

मैं—सबसे अधिक सत्यवादी कौन है ?

बाबा—कवि, सम्पादक और वकील-बैरिस्टर।

मैं—मनुष्य-जीवन का उद्देश्य क्या है ?

बाबा—कमजोरो को सताना और बलवानों से दब जाना।

मैं—श्राद्ध किसका करना चाहिए ?

बाबा—गौराग महाप्रभुओं का।

मैं—मर कर जीव कहाँ जाता है ?

बाबा—धन की ढेरी पर और मोह के मन्दिर मे।

मैं—पाप किसे कहते है ?

बाबा—बिरादरी के विरुद्ध व्यापार को।

मैं—बुद्धिमान कौन है ?

वावा—जो धूर्त्तता से अपना काम निकाल सके।

मैं—मूर्ख की परिभाषा क्या है ?

बाबा—सीधा हो, सज्जन हो और अपने हृदय के भाव सब पर सरलता से प्रकट कर दे।

मैं—शुद्धता कहाँ है ?

बाबा—व्हिस्की के प्यालो और होटलो के निवालो मे।

मैं—आचार-विचार किसे कहते है ?

बाबा—उछल कर चौके मे जाने और धोकर लकड़ी जलाने को।

मैं—जीवन की सफलता किसमे है ?

बाबा—ढोंग रचने और धूम मचाने मे।

मैं—बहादुर कौन है ?

बाबा—जो अवसर आने पर जान वचा कर भाग जाता है।

मे—प्रतापी नरेश कौन है ?

बाबा—जो दीन प्रजा को सदैव पराधीन बनाए रक्खे।

मैं—नेता किसे कहते है ?

बाबा—जो सदैव अपने ही व्यक्तित्व का ध्यान रखता है और अपनी ही बात चलाता है। लोकमत का तनक भी आदर नही करता।

मैं—आध्यात्मिक ज्ञान की सर्वोत्तम पोथी कौन-सी है ?

बावा—आल्हा-ऊदल के सॉग, तुकहीन तुकवन्दियाँ और भौगा भजनीकों का 'भजन-तमचा'।

मैं—वेदो को उचित आदर कहॉ दिया जाता है ?

बाबा—मुद्रण यन्त्रालयो के गोदामो और वेद-भक्तो की अलमारियो मे।

मैं—इस समय वेदो की रक्षा करने वाले कौन है ?

बाबा—दफ़्तरी लोग या जिल्दसाज।
मैं—वेदो का प्रचार कैसे हो सकता है ?
बाबा—अखबारो मे नोटिस छपाने या बुकसेलरो की दूकानों से।
मैं—चुनाव के समय 'वोट' किस को देना चाहिए।
बाबा—जो खूब खुशामद करे और नोटो की पोट पाकिट में पटक दे।

मै— देशभक्त' का सब से बडा गुण क्या है ?
बाबा—सरकार की चापलूसी और आत्मगौरव का अभाव।
मै—गुरुकुलो मे किन्हे पढाना चाहिए ?
बाबा—जिनके पिता वकील, बैरिस्टर, डाक्टर, एडीटर, लीडर, डिप्टी कलक्टर, मुन्सिफ, प्रोफैसर, सबजज और जज न हो।

मैं—गुण-कर्म्म-स्वभाव से शादी किन्हे करनी चाहिए ?
बाबा—जिन्हे अपने जन्म के वर्ण से ऊँचे वर्ण की कन्या मिल सके।

मैं—दान का उचित अधिकारी कौन है ?
बाबा—जो अधिक से अधिक दाता की प्रशसा और प्रसिद्धि करने मे कुशल हो।

मैं—'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का अर्थ क्या है ?
बाबा—कहना बहुत और करना कुछ नही !
मै—घासलेटी साहित्य' का क्या अर्थ है ?
बाबा—नवयुवको के उद्धार की अमोघ ओषधि।
मैं—इसका सेवन किस प्रकार किया जाता है ?
बाबा—चाकलेटी चटनी के साथ।
मैं—लोगो की पद-लोलुपता कैसे दूर हो सकती है ?
बाबा—जलसो मे सभापति की कुर्सी पर बैठने और अखबारों मे प्रशसा छपाने से।

मैं—ईश्वर से भी बडी दुनिया में कौन-सी चीज है ?
बाबा—'चन्दा ! चन्दा ! चन्दा !'
मैं—सच्ची 'कर्मवीरता' क्या है ?
बाबा—जो खतरे से खाली हो।
मैं—समाचारपत्रो का मुख्य उद्देश्य क्या होना चाहिए !
बाबा—ग्राहक-सख्या बढाना और रुपया कमाना !
मैं—'सस्था' किसे कहते है ?
बाबा—विना पूँजी की दूकान को।
मैं—यशस्वी चिकित्सक के क्या लक्षण है ?
बाबा—जो अपने जीवन मे कम से कम सौ रोगियो को यमपुर पहुँचा चुका हो।
मैं—सिद्धहस्त सम्पादक किसे कहना चाहिए ?
बाबा—जिसे लेखो की चोरी करने मे जरा भी शर्म न मालूम पडे।
मैं—म्युनिसिपिल बोर्ड क्या है ?
बाबा—निकम्मे मेम्बरो का 'पिजरापोल।'
मैं—डिस्ट्रिक्ट बोर्ड क्या है ?
बाबा—गॉवो के जमीदारो की पचायत।
मैं—और महाराज ! कौसिल ?
बाबा—वकील-बैरिस्टरो का 'डिबेटिग क्लब।'
मैं—किसी पुण्य-कर्म करने का सबसे अच्छा अवसर कौन-सा है ?
बाबा—दीवानी और फौजदारी दोनो कचहरियो की तातीले हो—तब।
मैं—लीडर लोगो का कार्यक्षेत्र कहाँ तक है ?
बाबा—जहॉ-जहॉ मोटर का पहिया आसानी से जा सके, और बढिया फल खाने को मिल सके।

मैं—हिन्दी का प्रचार कैसे होगा ?
बाबा—अँगरेजी लिखने, पढने और बोलने से।
मैं—आनरेरी लोग कौन है ?
बाबा—जो नियत वेतन न लेकर भरपूर भत्ता वसूल करते रहते है।
मैं—जीवन-दान किन्हें देना चाहिए ?
बाबा—जो ससार मे किसी काम के लायक न रहे।
मैं—छायावाद की सर्वोत्तम कविता कौनसी है ?
बाबा—जो स्वयम् लिखने वाले कवि की समझ मे भी न आवे।
मैं—भारतवासियो के लिए सबसे अच्छे अस्त्र-शस्त्र क्या है ?
बाबा—सेठ साहूकारो के लिए 'पियानो' और 'हारमोनियम'। पढे-लिखो के लिए प्रस्तावो की 'पिस्तौल' और 'रिजोल्यूशनो के 'रिवाल्वर।'

महाराज, आज आपने मेरी सारी सशय-निवृत्ति करदी, अब मेरी आत्मा को परम शान्ति प्राप्त हुई है। मेरे हृदय की उद्विग्नता दूर हो गई ! आप मुझे जो आदेश देंगे, अब मैं वही करूँगा। धन्य गुरुवर, धन्य ! आज आपके दर्शन कर मेरे नेत्र और उपदेश सुनकर कान पवित्र हो गए। मैंने आपके पाद-पद्मो की पूजा कर अपने को धन्य समझा। यह सुनकर बाबा विचित्रानन्दजी बोले—'जाओ, बच्चे अब अपने घरबार की सुध लो और हमारे बताये विधान द्वारा लोक-परलोक साधो। बस, तुम इस जीवन मे ही मुक्त हो जाओगे, और सदेह सीधे स्वर्ग को चले जाओगे। मैंने तुम्हे क्रिया ही ऐसी बता दी है। अच्छा, अब हम समाधि लगाते हैं।'